सतसंग-

२५

गुरु कहें खोल कर भाई

(स्वामीजी महाराज)

महाराज चरनसिंह जी

शब्द सत्संग

गुरु कहें खोल कर भाई। लग शब्द अनाहद जाई ।।
बिन शब्द उपाव न दूजा। काया का छुटे न कूज़ा ।।
घर में घर गुरु दिखलावें। धुन शब्द पाँच बतलावें ।।
धुन में अब सुरत लगावो । इस घर से उस घर जावो ।।
वह घर है अगम अपारा । दसवें के पार निहारा ।।
दस द्वारा घट चढ़ खोलो। सत शब्द अधर पै तोलो ।।
बिन मेहर गुरू नहिं पावे। बिन शब्द हाथ नहिं आवे ।।
सुर्त खैंच चढ़ावो गगनी। धुन शब्द सुनो यह करनी ।।
मन चंचल थिर न रहावे। चित निर्मल कस होय आवे ।।
सुर्त शब्द कमाई करना। सब जतन दूर अब धरना ।।
निश्चय दृढ़ इस पर धरना। आलस कर कभी न फिरना ।।
यह सार सार सब गाया। संतन मत भाख सुनाया ।।
राधास्वामी भेद लखाया। सुन मान सार समझाया ।।

(सार बचन, पृ. १६१)

सत्संग

बचन २०, उपदेश सुरत शब्द के अभ्यास का, शब्द दसवाँ

गुरु कहें खोल कर भाई । लग शब्द अनाहद जाई ।।

यह श्री हुजूर स्वामीजी महाराज की वाणी है। पहले दिन मैंने तुलसी साहिब महाराज की वाणी ली थी, कल मैंने गुरु नानक साहिब के घर की वाणी ली थी, आज मैं स्वामीजी महाराज की वाणी ले रहा हूँ। मैंने पहले भी अर्ज़ की थी कि भिन्न-भिन्न महात्माओं की वाणी लेने से मेरा केवल यही भाव है कि हरएक महात्मा का एक ही सन्देश है, एक ही उपदेश है। मैं हमेशा अर्ज़ करता हूँ कि महात्मा किसी जाति, किसी धर्म, किसी देश या किसी काल में क्यों न आये हों, सभी महात्मा हमें परमात्मा की भक्ति करने का एक ही उपाय समझाते हैं, एक ही साधन समझाते हैं। संसार में कोई भी महात्मा कभी जाति या धर्म बनाने के लिए नहीं आते, न ही कोई महात्मा किसी के हाथ में डण्डे और तलवारें देने के लिये आते हैं। वे हमसे केवल उस परमात्मा की भक्ति करा कर, हमें देह के बन्धनों से मुक्त करके वापिस उस परमात्मा से मिलाने के लिये आते हैं। परन्तु आम तौर पर ऐसे मालिक के भक्तों और प्यारों के जाने के बाद हम उनकी असली शिक्षा को, असली उपदेश को बिलकुल भूल जाते हैं। हम बाहरमुखी हो जाते हैं, ईंटों-पत्थरों में फँस जाते हैं और महात्माओं की शिक्षा को छोटे-छोटे दायरों में बन्द करके जातियों, धर्मों और देशों का रूप देने की कोशिश करते हैं और एक-दूसरे से लड़ना-भिड़ना शुरू कर देते हैं। हम ऐसा क्यों करते हैं? कोई अपने पेट के लिए करता है, कोई अपने आदर और मान-बढ़ाई के लिए करता है। आप देखें, जिन महात्माओं की शिक्षा कुल आलम के लिये है, सारे संसार के लिये है, यदि कोई उनके

उपदेश को छोटे-छोटे दायरों में बन्द करने की कोशिश करता है, तो इससे अधिक और उन मालिक के भक्तों तथा प्यारों के साथ और क्या अन्याय करेगा। उदार हृदय से किसी भी महात्मा की वाणी की खोज करें, यही पता चलेगा कि हरएक महात्मा का एक ही सन्देश है, हरएक महात्मा का एक ही उपदेश है।

यहां स्वामीजी महाराज समझाते हैं कि यह रचना, यह संसार जो कुछ भी हम आँखों से देख रहे हैं, यह चौरासी लाख जिया-जून का बहुत बड़ा जेलखाना है। इस जेलखाने से निकलने का उस मालिक ने केवल एक ही दरवाज़ा रखा है। वह कौन-सा दरवाज़ा है ? वह मनुष्य का चोला है। यह चोला हमें परमात्मा इसलिये देता है कि इससे लाभ उठा कर हम मालिक की भक्ति करें, नाम की कमाई करें ताकि हमारा देह के बन्धनों से, जन्म-मरण के दुःखों से सदा के लिए छुटकारा हो सके। यदि मनुष्य के शरीर में आने का लाभ है तो वह केवल मालिक की भक्ति, मालिक का प्यार है। बेटे-बेटियां हमें हर जामे में मिलते आये हैं, खाना-पीना ऐश्वर्य हम हर जामे में करते आये हैं। यदि कोई अनोखी चीज़ है, जो हम पिछले किसी जामे में प्राप्त नहीं कर सके, केवल अब ही प्राप्त कर सकते हैं, वह मालिक की भक्ति है, परमात्मा की खोज है, परमात्मा का मिलाप है। इसीलिए महात्मा उपदेश देते हैं कि आप सदा अपनी मंज़िले-मकसूद को, अपने असली लक्ष्य को आंखों के आगे रखें, अपना रूहानी सफ़र-तय करने की कोशिश करें ताकि आपका देह में आने का वास्तविक उद्देश्य पूरा हो सके। गुरु नानक साहिब कहते हैं :

लख चउरासीह जोनि सबाई ॥ माणस कउ प्रभि दीई वडिआई ॥
इसु पउड़ी ते जो नरु चूकै, सो आइ जाइ दुखु पाइदा ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ. १०७५)

कि यह जो इन्सान का जामा है, मनुष्य का शरीर है, यह सीढ़ी का अंतिम डण्डा है। कोशिश करेंगे तो अपने घर में पहुँच जायेंगे, यदि पाँव फिसल जाता है, सीधे नीचे आ गिरते हैं। यदि मनुष्य-जन्म में

आकर परमात्मा की भक्ति करते हैं, तो वापिस जाकर परमात्मा में समा जाते हैं। यदि-विषयों-विकारों, शराबों-कबाबों, इन्द्रियों के भोगों, धर्मों और देशों के झगड़ों में ही फँसे रहते हैं तो इन सबका परिणाम भुगतने के लिए हरएक को बार-बार इस चौरासी के जेलखाने में आना पड़ता है। इसलिए महात्मा कहते हैं कि हमें इस अवसर से पूरा-पूरा लाभ उठाना चाहिये, मालिक की भक्ति करनी चाहिए। परन्तु हम इतना इन्द्रियों के भोगों में फँस जाते हैं कि और तो और अपनी मृत्यु को भी भूल बैठते हैं। रोज़ देख रहे हैं कि हमारे साथी हमारा साथ छोड़ते जा रहे हैं। एक-एक के साथ जाकर खुद श्मशान-भूमि में छोड़ कर आते हैं और आँखों से देखते हैं कि जिन शक्लों और पदार्थों के साथ वह इतना मोह और प्यार करता था, उनमें से किसी चीज़ ने भी उसका साथ नहीं दिया। परन्तु हमारे मन में यह ख़याल रह जाता है कि शायद वह उन चीज़ों को इकट्ठा करके साथ नहीं ले जा सका, हम ज़रूर इनको इकट्ठा करके साथ ले जायेंगे।

इसलिए हरएक महात्मा हमें ग़फ़लत की नींद से बेदार करता है, चेताता है कि आप उस समय और वक्त को आँखों के आगे रख कर देखें, उस समय कौन आपकी सहायता करता है, कौन आपकी मदद करता है। यह बेटे-बेटियाँ, रिश्तेदार, यार-दोस्त, बहन-भाई, जिनके लिए हम इतनी-इतनी बेईमानी करते हैं, जीवन के कितने कीमती उसूलों को कुरबान करते हैं, उनको तो यह भी पता नहीं लगता कि मौत के फ़रिश्ते आते किस ओर से हैं और हमें कानों से पकड़ कर ले किस ओर जाते हैं। सिवाय इसके कि हम एक-दूसरे से बिछुड़ने पर रोने पर ज़ोर दे दें, आप देखें, और तो हम किसी की कोई सहायता, कोई मदद नहीं कर सकते। इसलिये महात्मा कहते हैं कि इनसे लेन-देन का सम्बन्ध है, स्वार्थ का प्यार है। कोई स्त्री बन कर आ गई, कोई पति बन कर आ गया, कोई बच्चे बन कर आ गये और कोई यार-दोस्त बन कर आ गये। जितना-जितना किसी से सम्बन्ध होता है, उसके समाप्त होने के बाद सब अपने-अपने रास्ते पर चले जाते हैं। न

ही आज तक किसी के साथ कोई गया है, न कभी किसी के साथ कोई जा सकता है। कई हमें छोड़ कर जा चुके हैं और कई को हम छोड़ कर जाने की तैयारी किये बैठे हैं।

एक रंग-मंच पर आकर सभी अभिनेता अपना-अपना पार्ट अदा करते हैं—कोई राजा का करता है, कोई रानी का करता है, कोई खलनायक का करता है। परन्तु जब पार्ट खत्म करके रंगमंच से उतरते हैं, न कोई राजा होता है, न कोई रानी होती है, न ही कोई खलनायक होता है। इस प्रकार यह संसार भी एक बहुत बड़ी स्टेज है। हम यहाँ अपने-अपने कर्मों के अनुसार हिसाब-किताब दे रहे हैं। पर यह हिसाब-किताब चुकाते हुए इतना इनके मोह और प्यार में फँस जाते हैं कि रात को सपने भी हमें इन्हीं के आते हैं और मृत्यु के समय इनकी शक्लें सिनेमा के पर्दे के समान हमारी आँखों के आगे आकर खड़ी हो जाती हैं। **'जहाँ आसा तहाँ बासा।'** जहाँ हमारा अंतिम समय ख़याल होता है, हम संसार के जीव उसी धारा में बहना शुरू कर देते हैं। इसलिए महात्मा कहते हैं कि संसार में रहो, परन्तु अपने ख़याल को मालिक की भक्ति में रखो, मालिक के प्यार में रखो। महात्मा संसार छोड़ने के लिए नहीं कहते, संसार से मन को निकालने के लिए कहते हैं। वे कहते हैं कि इतना इनके मोह और प्यार में न फँसो कि जिस उद्देश्य के लिए परमात्मा ने मनुष्य का शरीर दिया है, उसको ही भूल जाओ। महात्मा समझाते हैं कि अंतिम समय को अपनी आँखों के आगे रख कर देखो कि उस समय कौन तुम्हारी सहायता करता है, कौन तुम्हारी मदद करता है। परन्तु हम शरीर के अहंकार में ही फँसे रहते हैं और अपनी मृत्यु को बिलकुल भूले रहते हैं।

आप सोच कर देखें, हम देह में बैठ कर अहंकार किस बात का करते हैं, गर्व किस चीज का करते हैं? जवानी का अहंकार करते हैं? क्या हमें किसी का बुढ़ापा दिखाई नहीं देता, क्या हमें कभी उस बुढ़ापे की उमर में नहीं पहुँचना है? सुन्दरता का, खूबसूरती का मान करते हैं? क्या कभी अस्पतालों में रोगियों की शक्लें नहीं देखीं? पीलिया

हो जाये, चेचक निकल आये, अपना ही मुख शीशे में देखने को मन नहीं करता। क्या हमें धन का अहंकार है? बड़े-बड़े राजा-महाराजाओं को, सेठों-साहूकारों को सड़कों पर कंगालों की तरह हमने भटकते देखा है। या हमें हुकूमत का, अधिकार का नशा है? बड़े-बड़े नेताओं को, जिनको हम मस्तक टेकते थे, उनको लोगों ने गोलियों का शिकार बना दिया। हम देह में बैठ कर अहंकार किस चीज़ का करते हैं? गर्व किस बात का करते हैं? स्वामीजी समझाते हैं:

मन रे क्यों गुमान अब करना ॥
तन तो तेरा खाक मिलेगा। चौरासी जा पड़ना ॥ (सार बचन, पृ. १२३)

कि आप अहंकार किस चीज़ का करते हैं? शरीर का? इसे तो मिट्टी में मिल कर मिट्टी बन जाना है; किसी का अग्नि के सुपुर्द हो जाता है, किसी का मिट्टी के सुपुर्द हो जाता है। मौत के बाद हमें धर्मराज के सामने पेश किया जाता है, जो हमारे कर्मों और इच्छाओं के अनुसार जिस जगह उचित समझेगा, जन्म दे देगा। एक देह के बन्धन से तो किसी का छुटकारा नहीं होता, दूसरा देह का पिंजरा पहले ही तैयार होता है। उसमें बाद में जाते हैं, मौत पहले ही आँखों के आगे आ कर खड़ी हो जाती है और दस नम्बरियों की तरह हथकड़ी लगी ही रहती है। जिनके कचहरी से रोज़ वारंट ही निकलते रहें, वे अहंकार किस चीज़ का करते हैं, गर्व किस चीज़ का करते हैं? कबीर साहिब फ़रमाते हैं:

"माटी कहे कुम्हार से, क्या रूँदे तू मोहि।
इक दिन ऐसा आयेगा, मैं रूँदूँगी तोहि॥"

कुम्हार मिट्टी को गूंध-गूंध कर बर्तन बनाता है। परन्तु मिट्टी कहती है कि कभी उस समय के बारे में भी थोड़ा सोच-विचार करें, जब मैं भी तुझे अपने अन्दर गूंध लूंगी, अपने अन्दर समा लूंगी। फिर कबीर साहिब कहते हैं:

'लकड़ी कहे लुहार को, क्या जारे तू मोहि।
इक दिन ऐसा आएगा, मैं जारूँगी तोहि॥'

लुहार लकड़ी को जला कर कोयले बनाता है, परन्तु लकड़ी कहती है, कभी उस समय के बारे में भी विचार किया है, जब मैं तुझे अपने साथ लेकर तेरे भी कोयले बना दूंगी। हम सोचते हैं कि मौत तो शायद दूसरे लोगों के लिये ही है, हमारे लिये शराबों-कबाबों के स्वाद हैं, बेटे-बेटियों के प्यार हैं, कौमों-मज़हबों के झगड़े हैं। महात्मा हमें गफ़लत की नींद से बेदार करते हैं कि किस उद्देश्य के लिए यहाँ आये थे और किस प्रकार तुम इन शक्लों और पदार्थों के मोह में फँस कर रात-दिन भटकते फिरते हो, रात-दिन तड़पते फिरते हो। स्वामीजी महाराज कहते हैं :

'धाम अपने चलो भाई। पराये देश क्यों रहना॥
काम अपना करो जाई। पराये काम नहिं फँसना॥
नाम गुरु का सम्हाले चल। यही है दाम गेंठ बँधना॥'

(सार बचन, पृ. १५१)

महात्मा समझाते हैं कि यह देश तुम्हारा देश नहीं है, यह जाति, तुम्हारी जाति नहीं है, यह धर्म तुम्हारा धर्म नहीं है। तुम्हारी जाति सतनाम है, तुम्हारा देश सचखण्ड है, तुम परदेसियों के समान इस संसार में मारे-मारे फिर रहे हो, भटकते फिर रहे हो। जिस प्रकार एक छोटे-से बच्चे को चुराकर, बहका कर, कोई लन्दन ले जाता है। वहीं पर वह शिक्षा प्राप्त करता है, शादी कर लेता है, वहाँ पर ही बाल-बच्चे हो जाते हैं। वह उस देश को ही अपना देश समझना शुरू कर देता है, उन लोगों को ही माता-पिता, बहन-भाई समझना शुरू कर देता है। परन्तु जब कोई उसके अपने देश का वासी वहाँ जाता है, जो उस देश की बोली समझता है। वह उसकी बोली और रहन-सहन को अपना कर उससे मित्रता करके उसे समझाने की कोशिश करता है कि देख, ये तेरे माता-पिता नहीं हैं, ये तेरे बहन-भाई नहीं हैं, यह तुम्हारा देश नही हैं। धीरे-धीरे उसके ज़रिये उसमें देश-भक्ति जाग उठती है, माता-पिता का प्रेम जाग उठता है और वह उसके समझाने के अनुसार अपने देश में वापिस आ जाता है। इसी प्रकार सन्त-महात्मा यहाँ

आकर, हमारे जैसे बनकर हमारी बोली में हमें समझाते हैं कि यह जाति, तुम्हारी जाति नहीं है, यह देश, तुम्हारा देश नहीं है, तुम व्यर्थ ही इनके मोह और प्यार में फँस कर भटक रहे हो, और इनमें सुख और शान्ति ढूंढने के लिये रात-दिन तड़पते फिरते हो। गुरु नानक साहिब कहते हैं: **'जिनि तुम भेजे तिनहि बुलाए सुख सहज सेती घरि आउ ॥'** (आदि ग्रन्थ, ६८७)। कि जिस परमात्मा ने तुम्हें इस संसार में भेजा है, उसी परमात्मा ने मुझे तुम्हें वापिस बुलाने के लिये भेजा है। तुम मेरे साथ आओ, मैं तुम्हें तुम्हारे घर ले चलूं। सो महात्मा तो केवल हमारे अन्दर उस मालिक से मिलने का शौक पैदा करते हैं, प्यार पैदा करते हैं।

जितना भी हमारा इस संसार से सम्बन्ध और ताल्लुक है, केवल इस शरीर के कारण है। परन्तु यह शरीर तो काल का पिंजरा है, किराये का मकान है, पराया मकान है; किसी को पचास-साठ वर्ष के लिये मिलता है, किसी को सत्तर-अस्सी वर्ष के लिये मिलता है। जितनें साँस मालिक ने बख़्शे हैं, भुगतने के बाद सबको शरीर यहीं छोड़ जाना है। न आज तक कभी किसी का शरीर साथ गया है, न कभी किसी का शरीर साथ जा ही सकता है। किसी का अग्नि के सुपुर्द हो जायेगा, किसी का मिट्टी के सुपुर्द हो जायेगा। इसलिए महात्मा कहते हैं कि आप देह में बैठ कर कौन-सी वस्तु का अहंकार करते हैं, कौन-सी चीज़ का मान करते हैं? अच्छी तरह सोच कर देखें कि कौन-सी चीज़ आपके साथ जायेगी? जब आपकी अपनी देह ही अपनी नहीं बनती तो और लोगों की देहें, लोगों के शरीर तुम्हारे अपने किस प्रकार बन सकते हैं?

स्वामीजी महाराज बहुत सुन्दर उदाहरण देते हैं कि एक मशक में हवा भरी हुई है। जितनी देर उसमें हवा भरी रहती है, वह मशक हमें पानी पर तैरती नज़र आती है, हम भी उस मशक का सहारा ले कर पानी को पार करते हैं, पानी पर तैरते हैं। जब मशक में से हवा निकल जाती है, वह पानी की तह में बैठ जाती है। जो उसका आसरा

लेकर पानी को पार करने की कोशिश करते हैं, वे भी गोतेखाने शुरू कर देते हैं। इसी प्रकार यह जो शरीर है, यह भी मशक के समान है। जब तक इसमें साँसों की हवा भरी रहती है, हम किस प्रकार दुनिया के काम-काज में लगे हुए हैं, परन्तु जब सांसों की हवा समाप्त हो जाती है, तो हमारी हस्ती ही समाप्त हो जाती है; जो हम से मोह और प्यार करके ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं, वे भी घबरा जाते हैं; रोना-पीटना शुरू कर देते हैं। सो स्वामीजी कहते हैं कि इस मशक में से एक दिन हवा ज़रूर निकल जायेगी। पचास वर्ष के बाद निकल जाये, साठ, सत्तर वर्ष के बाद निकल जाये। इसलिये जिस समय तक सांसों का भण्डार जारी है, जब तक परमात्मा ने देह में बैठने का अवसर दिया है, अपने असली घर की खोज कर लेनी चाहिये, मालिक की भक्ति कर लेनी चाहिये, मालिक से प्यार कर लेना चाहिये।

हमारी आत्मा उस परमात्मा का अंश है, हम उस सतनाम समुद्र की बूंदें हैं, परन्तु उस मालिक से बिछुड़ कर इस माया के जाल में फँसे हुए हैं। इस जगह आकर हमारी आत्मा ने मन का साथ ले लिया है। मन इन्द्रियों के भोगों, विषयों-विकारों, शराबों-कबाबों, दुनिया के धन्धों का आशिक है। जो-जो कर्म हम मन के अधीन होकर करते हैं—अच्छे भी करते हैं, बुरे भी करते हैं, उन सभी का परिणाम साथ-साथ हमारी आत्मा को भी देना पड़ता है। स्वामीजी महाराज कहते हैं, **'करम जो जो करेंगा तू। वही फिर भोगना भरना।।'** (सार बचन, पृ. १४३)। अच्छे कर्म करोगे तो अच्छा परिणाम भुगतने के लिये आ जाओगे। बुरे कर्म करोगे, तो बुरा परिणाम पाने के लिये आ जाओगे। न अच्छे कर्मों के कारण कोई देह के बन्धनों से छुटकारा पा सकता है और न ही कोई बुरे कर्मों के द्वारा जन्म-मरण के दुःखों से बच सकता है। यदि नेक कर्म करते हैं, क्या परिणाम होता है? सेठ-साहूकार बन जाते हैं, राजा-महाराजा बन जाते हैं, जातियों, धर्मों, देशों का शासन प्राप्त करके आ जाते हैं। लोहे की जंजीरें उतरती हैं, सोने की बेड़ियाँ पड़ जाती हैं। 'सी' श्रेणी से निकलकर 'ए' श्रेणी प्राप्त कर लेते हैं। हाथ

से झाड़ू निकल जायेगा, शासन की बागडोर मिल जायेगी। झोंपड़ी में से बिस्तर उठायेंगे, महलों में जाकर बिछा लेंगे। अधिक से अधिक बैकुण्ठों और स्वर्गों तक पहुँच जायेंगे। वे भी भोग-योनियां हैं, निश्चित अवधि के लिये हैं। उसके बाद हमारे लिये नरक और चौरासी तैयार ही रहते हैं। क्या राजा, क्या प्रजा, क्या अमीर, क्या गरीब, क्या स्त्री, क्या पुरुष, सभी संसार के जीव यहाँ आकर अपने-अपने कर्मों का हिसाब-किताब दे रहे हैं। इन कर्मों के कारण, जिस जगह भी जाकर कोई जन्म लेता है, उसी शरीर में दुःख और मुसीबतें सहनी पड़ती हैं, किसी चोले में कभी कोई सुख प्राप्त नहीं कर सकता, कभी कोई शान्ति प्राप्त नहीं कर सकता।

सोचकर देखें, रोज़ हमारे पेट के लिये हज़ारों प्रकार के जानवर मारे जाते हैं। किस प्रकार उनके रोने-पीटने, चीखने-चिल्लाने पर भी हम उनकी गर्दनों पर छुरियाँ चलाते हैं। हमने कभी मन में विचार किया है कि यदि अपने कर्मों के कारण हमें वहां जाकर जन्म लेना पड़ जाये, उनके हाथों में छुरियाँ और कुल्हाड़ियां हों और हमारी गर्दन उनके नीचे हो तो हमारी क्या दुर्दशा होगी, हमारी क्या हालत होगी ? एक डॉक्टर पतली-सी सुई, टीका लगाने के लिये गर्म करता है, हमारी इतनी बड़ी देह थर-थर काँपना शुरू कर देती है। परन्तु उन ग़रीब जानवरों पर, बेज़बानों पर किस निर्दयता के साथ हमारे पेट की ख़ातिर छुरियाँ चल रही हैं। दूसरे जामों की दशा का तो क्या वर्णन किया जाये, आप मनुष्य के जामे को देखें। जिसको हम 'टाप आफ दी क्रिएशन' या सृष्टि का सिरमौर कहते हैं, 'अश्रुफुल मख़लूकात' कह कर याद करते हैं, जिसको ऋषियों-मुनियों ने 'नर-नारायणी देह' कह कर याद किया है, इस शरीर में बैठ कर कोई कौन-सा सुख प्राप्त कर सकता है। कोई ग़रीब बीमारी के हाथों तंग आया बैठा है, कोई बे-रोज़गारी के हाथों दुःखी हो जाता है। जिनके सन्तान नहीं होती, वे बेचारे तड़प रहे हैं, किसी को सन्तान ने दुःखी किया हुआ है। किसी को कर्ज़ लेना है, किसी को कर्ज़ देना है। सर्दी में आप सड़कों पर

जाकर कंगालों की दशा देखें, जेलखानों में जाकर कैदियों की कहानियाँ सुनकर देखें, अस्पतालों में कभी रोगियों की चीखें सुनें। अखबार पढ़ कर देख लें, रेडियो सुनकर देख लें, किस प्रकार जातियों, धर्मों और देशों के झगड़े शुरू हैं। कितने गरीबों का खून होता है, कितनी स्त्रियाँ विधवा होती हैं, कितने बच्चे अनाथ होते हैं। जिस नगरी में यह हालत है कि रोटी-कपड़े के लिये तड़पते फिरते हैं, उस जामे में बैठ कर कोई सुख किस प्रकार प्राप्त कर सकता है, शान्ति किस प्रकार प्राप्त कर सकता है? गुरु अमरदास जी कहते हैं, **पिर सचै ते सदा सुहागणि ।।'** (आदि ग्रन्थ, पृ. ७५४)। कि हमारी आत्मा स्त्री है, वह परमात्मा इसका पति है। जब तक यह आत्मा रूपी स्त्री परमात्मा रूपी पति के चरणों में नहीं पहुँचती, इसका कभी भी जन्म-मरण के दुःखों से छुटकारा नहीं हो सकता।

सन्तों-महात्माओं ने आत्मा और परमात्मा के रिश्ते को स्त्री और पति का रिश्ता कहकर वर्णन किया है। स्वामीजी महाराज कहते हैं:

'सुरत सुन बात री। तेरा धनी बसे आकाश ।।' **(सार बचन, १४५)**

क्योंकि आत्मा और परमात्मा में भक्ति का सम्बन्ध है, प्रेम का सम्बन्ध है, प्यार का सम्बन्ध है। कल मैं खोल कर अर्ज़ कर चुका हूँ कि यह कोई जात-पात का रिश्ता नहीं है, यह कोई राष्ट्र, धर्म और देश का रिश्ता नहीं है। यह केवल इश्क, प्रेम और प्यार का रिश्ता है। इसलिये महात्मा इसको स्त्री और पति का रिश्ता कह कर याद करते हैं। रामकृष्ण मिशन वाले इसको माता और बेटे का रिश्ता कह कर याद करते हैं। हज़रत ईसा ने इसको बाप और बेटे का सम्बन्ध कह कर याद किया है। इन सभी रिश्तों में एक ही वस्तु समान है— वह भक्ति है, प्रेम है, प्यार है। यही कारण है कि हर महात्मा हमारी आत्मा में उस मालिक से मिलने का इश्क पैदा करता है, मालिक से मिलने का प्यार पैदा करता है।

अब हम संसार के जीव अपनी-अपनी समझ के अनुसार हज़ारों युक्तियों और तरीकों से परमात्मा को ढूँढने की कोशिश करते हैं।

आप देखें, हम जप-तप करते हैं, पूजा-पाठ करते हैं, पुण्य-दान करते हैं, घर-बार छोड़ कर जंगलों-पहाड़ों में छिपकर बैठ जाते हैं, सरोवरों में स्नान करते हैं, ग्रन्थ-पोथियाँ, वेद-शास्त्र पढ़ते हैं, भभूत लगाते हैं, कान फड़वाते हैं। ये सभी साधन, सभी तरीके हम केवल एक परमात्मा से मिलने के लिये ही करते हैं। परन्तु यहाँ स्वामीजी महाराज प्यार से समझाते हैं कि भाई, मालिक से मिलने का केवल एक ही तरीका है। वह कौन-सा तरीका है ? **'लग शब्द अनाहद जाई ।।'** कि अपने अन्तर में सुरत को अनहद शब्द से जोड़ें। जब तक आप अन्तर में अनहद शब्द को नहीं पकड़ते, आप में से किसी का भी कभी मुक्ति प्राप्त करने का सवाल ही पैदा नहीं हो सकता। गुरु नानक साहिब कहते हैं :

> **बाबा जगु फाथा महा जालि ।।**
> **गुर परसादी उबरे सचा नामु समालि ।। (आदि ग्रन्थ, पृ. १००६)**

कि यदि गुरुमुखों के उपदेश पर चलकर सच्चे नाम और सच्चे शब्द की कमाई में लग जायेंगे तो आप इस भवसागर से सदा के लिये पार हो जायेंगें। इसलिये महात्मा हमारे अन्दर उस शब्द की कमाई करने का प्यार पैदा करते हैं, नाम की कमाई करने का शौक पैदा करते हैं।

शब्द और नाम की कमाई करने का क्या मतलब है ? महात्मा समझाते हैं कि शब्द या नाम दो प्रकार का है। एक वर्णात्मक शब्द है, दूसरा धुनात्मक शब्द है। वर्णात्मक शब्द, महात्मा उनको कहते हैं जो हमारे लिखने में आते हैं, पढ़ने में आते हैं, बोलने में आते हैं। ये जितने भी हमने अपने-अपने प्यार में आकर परमात्मा के नाम रखे हैं— अल्लाह, वाहिगुरु, हरिओम, राधास्वामी, परमात्मा, परमेश्वर; आदि— ये सभी हमारे लिखने में आते हैं, पढ़ने में आते हैं, बोलने में आते हैं। पहले तो हमारे कितने ही देश हैं, प्रत्येक देश में कितनी-कितनी भाषायें हैं और प्रत्येक भाषा में महात्माओं ने परमात्मा को कितने नामों से याद किया है। अभी हज़ारों-अनेकों महात्माओं को संसार में आना है

और हज़ारों-अनेकों लफ्ज़ों से उस परमात्मा को याद करना है। पिछले महात्माओं द्वारा रखे हुए परमात्मा के नाम हम भूलते जा रहे हैं, आगे प्यार में आकर परमात्मा के नाम रखते चले जा रहे हैं। जिस प्रकार माता अपने बच्चे को प्यार से कई लफ़्ज़ों द्वारा याद करती है—परन्तु माता का बच्चे से जो रिश्ता है, वह लफ़्ज़ों का रिश्ता नहीं है, भक्ति और प्यार का रिश्ता है। माँ किसी भी लफ़्ज़ से अपने बच्चे को याद कर सकती है, लफ़्ज़ तो माँ के प्यार को प्रकट करते हैं—इसी प्रकार मालिक के भक्तों और प्यारों का परमात्मा से जो रिश्ता है, वह कोई लफ़्ज़ों का रिश्ता नहीं, भक्ति का रिश्ता है, प्यार का रिश्ता है। ये लफ़्ज़ तो महात्मा के प्यार को प्रकट करते हैं, ज़ाहिर करते हैं। वह जो रिश्ता है, वह सच्चे प्यार का रिश्ता है, सच्चे शब्द का, सच्चे नाम का रिश्ता है जो न आँखों से देखा जा सकता है, न कानों से सुना जा सकता है और न जिसका ज़बान से वर्णन किया जा सकता है। जिसको हुज़ूर महाराज जी 'अनरिटन लॉ, अनस्पोकन लेंग्वेज़' (अलिखित कानून, अबोली भाषा) कह कर याद किया करते थे। हज़रत ईसा समझाते हैं, 'आँखें होने पर भी तुम उसको देख नहीं सकते, कान होने पर भी तुम उसको सुन नहीं सकते'। यही गुरु साहिब वाणी में लिखते हैं :

> 'अखी बाझहु वेखणा विणु कंना सुनणा ॥
> पैरा बाझहु चलणा विणु हथा करणा ॥
> जीभै बाझहु बोलना इउ जीवत मरणा ॥
> नानक हुकमु पछाणि कै तउ खसमै मिलणा ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. १३९)

कि आप उस शब्द या नाम या हुकम को पकड़ कर अपने ख़सम या परमात्मा से मिलोगे, जिसको न तो आपकी आँखें देखती हैं, जिसका न आपकी ज़बान वर्णन कर सकती है, न कान सुन सकते हैं। वहाँ न किसी के हाथ लेकर पहुँचते हैं, न किसी के पैर लेकर पहुँचते हैं और जिस चीज़ को हम सब जीते-जी मर कर प्राप्त कर सकते हैं। जीते-जी मरने का मतलब है नौ द्वारों से ख़याल को निकाल कर आँखों के

पीछे लाकर प्राप्त कर सकते हैं। हमारे शरीर में जो आत्मा और मन का स्थान है—जिसको कोई 'शिवनेत्र' कहता है; कोई 'दिव्यचक्षु' कहता है, कोई 'घर-दर' कहता है, कोई 'मुक्ति का दरवाज़ा' कहता है—वह स्थान हरएक की आँखों के पीछे है। इस स्थान से सबका ख़याल उतरता है। नौ द्वार हैं—दो आँखें, दो कान के सुराख, दो नाक के सुराख, मुंह और नीचे दो इन्द्रियों के सुराख। इन नौ द्वारों के ज़रिये हमारा ख़याल सारे संसार में फैल जाता है। यहाँ बैठे हुए कभी बाल-बच्चों का ख़याल आता है, कभी घर के कारोबार का ख़याल आता है, कभी दुकान के ग्राहकों का ख़याल आता है। मन कभी किसी का निचला नहीं बैठता। कितनी ही अँधेरी कोठरियों में अपने-आप को बन्द क्यों न कर लें, आप वहाँ नहीं होंगे, आपका मन सारी दुनिया में फैला हुआ होगा।

हमें गुरुमुखों के समझाने के अनुसार सुमिरन और ध्यान द्वारा, इस फैले हुए ख़याल को वापिस लाकर आँखों के पीछे इकट्ठा करना है। जब आँखों के पीछे ख़याल इकट्ठा करते हैं, स्वामीजी महाराज कहते हैं, हमें अपने-आप अन्तर में समझ आ जाती है कि वह मीठी से मीठी तथा सुरीली से सुरीली आवाज़, जो मालिक की दरगाह से आ रही है, वह चोरों में भी है, ठगों में भी है, साधू, सन्तों, महात्माओं में भी है। वहाँ पर किसी जाति का, धर्म का, देश का सवाल ही नहीं उठ सकता। आप हिन्दू हो कर अन्दर जायें, सिक्ख या ईसाई होकर अन्दर जायें, जो भाग्यवान, खुशकिस्मत ख़याल को आँखों के पीछे इकट्ठा करता है, वह अपने अन्दर उस शब्द की आवाज़ को सुनना शुरू कर देता है, शब्द के प्रकाश को देखना शुरू कर देता है। हमारी आत्मा की देखने की शक्ति को स्वामीजी 'निरत' कहते हैं। इसकी सुनने की शक्ति को आप 'सुरत' कहते हैं। आँखों के पीछे आकर सुरत शब्द की आवाज़ को सुनना शुरू कर देती है, और निरत शब्द के प्रकाश को देखना शुरू कर देती है। हम उस आवाज़ के द्वारा घर की दिशा निश्चित कर लेते हैं, उस प्रकाश के द्वारा अपना रूहानी सफ़र तय

करना शुरू कर देते हैं।

उदाहरण के लिये, यदि आप शाम को अपनी बस्ती से सैर करते-करते नदी के किनारे कहीं बहुत दूर निकल जायें, रात हो जाये, अँधेरा हो जाये, आपको पता न लगे कि किस ओर बस्ती छोड़ आये हैं, तो आप वापिस घर आने के लिए क्या करेंगे? आप ध्यान से सुनेंगे, बस्ती की ओर से कोई न कोई आवाज़ आती हो, रेडियो की या किसी टेप रिकार्ड की आवाज़ आती हो। उस आवाज़ के द्वारा आप एकदम अपने घर की दिशा निश्चित कर लेंगे कि आपका घर अगली ओर है या पिछली ओर है, बायीं ओर है या दायीं ओर है। जिस समय आपको घर की दिशा का पता लग जाता है, क्योंकि मार्ग में ऊँची-नीची ज़मीन है, गड्ढे-टीले, झाड़ियाँ हैं, अगर आपके हाथ में टार्च अथवा लैम्प हो, आप उससे रास्ता देखते-देखते भूले हुए फिर अपने घर वापिस आ जाते हैं। कौन-सी चीज़ आपको अपने घर वापिस लाई? वह आवाज़ लाई, वह प्रकाश लाया।

स्वामीजी महाराज कहते हैं कि इसी प्रकार उस परमात्मा ने हरएक के अन्दर आवाज़ रक्खी हुई है, प्रकाश भी रखा हुआ है। हमें आँखों के पीछे आकर अन्तर में उस शब्द की आवाज़ को पकड़ना है, उस शब्द के प्रकाश को देखना है। उस आवाज़ के द्वारा अपने अन्दर घर की दिशा कायम करनी है, प्रकाश के द्वारा अन्दर रूहानी सफ़र तय करना शुरू कर देना है और मंज़िल-दर-मंज़िल अपने घर की ओर वापिस आ जाना है। गुरु साहिब कहते हैं: **'अंतरि जोति निरंतरि बाणी साचे साहिब सिउ लिव लाई ॥'** (आदि ग्रन्थ, पृ. ६३४) कि तुम्हारे सबके अन्दर आँखों के पीछे ज्योति जल रही है, उस ज्योति के अन्दर से मीठी से मीठी, सुरीली से सुरीली आवाज़ पैदा हो रही है। जो भाग्यवान आँखों के पीछे खयाल को इकट्ठा करके उस ज्योति के दर्शन करते हैं, उस वाणी अथवा आवाज़ को सुनते हैं, **'साचे साहिब सिउ लिव लाई'**, उनका संसार में से मोह और प्यार निकल जाता है, उनका परमात्मा से मोह और प्यार पैदा हो जाता है। इसी वाणी

को महात्मा सच्चा शब्द और सच्चा नाम कह कर याद करते हैं।

ये जो हमारे शब्द हैं, आप इन सबका इतिहास लिख सकते हैं, समय निश्चित कर सकते हैं। स्वामीजी महाराज को आये केवल सौ वर्ष हुए हैं, जिनके जाने के बाद हमने कुल मालिक को 'राधास्वामी' कह कर याद करना शुरू कर दिया। गुरु नानक साहिब को आये पाँच सौ वर्ष हुए हैं, जिनके जाने के बाद हम 'वाहिगुरु' कहने लगे। मुहम्मद साहिब को आये तेरह-चौदह सौ वर्ष हुए हैं, जिनके जाने के बाद हम 'अल्लाह-अल्लाह' कहने लगे। श्री रामचन्द्र जी महाराज को आये हुए इससे भी अधिक समय हुआ है, जिनके जाने के बाद हमने 'राम-राम' कहना शुरू कर दिया। आप प्रत्येक लफ़्ज़ की अवधि निश्चित कर सकते हैं; परन्तु जिस सच्चे शब्द और नाम की महात्मा महिमा करते हैं, उसने तो संसार की रचना की है, उसके आधार पर सब खण्ड-ब्रह्माण्ड खड़े हैं। गुरु नानक साहिब कहते हैं :

सबदे धरती सबदे अकास। सबदे सब्द भया परगास ॥
सगली सृसटि सबद के पाछे। नानक सबद घटे घटि आछे ॥

(प्राण संगली, पृ. १६)

उस शब्द ने धरती पैदा की है, सूर्य पैदा किया है, चन्द्र पैदा किया है; उस शब्द ने सारे संसार की रचना की है और वह शब्द सबके अन्दर घट-घट में रात-दिन धुनकारें दे रहा है। जिस चीज़ ने सारे संसार की रचना की है, जिसके आधार पर खण्ड-ब्रह्माण्ड खड़े हैं, उस शक्ति की अवधि कौन निश्चित कर सकता है, वह शक्ति लिखने, पढ़ने और बोलने में किस प्रकार आ सकती है? ये लफ़्ज़ हमारे साधन हैं, वह शक्ति हमारा लक्ष्य अथवा मंज़िल है। हमें लफ़्ज़ों के साथ प्यार पैदा करके जातियों धर्मों व देशों के झगड़े नहीं खड़े करना है; हमें तो इन लफ़्ज़ों के द्वारा अन्तर में उस शब्द की खोज करनी है, उस नाम की खोज करनी है जो शब्द और नाम सबके अन्दर है।

ये जितने भी हमारे धर्म हैं, इन सबके रीति-रिवाज़ अलग-अलग हैं, क्योंकि ये सब हमारे अपने पैदा किये हुए हैं, परन्तु जो सच्ची

रूहानियत है, असलियत है, हकीकत है, वह हर धर्म की तह में एक ही चीज़ है। उस रूहानियत को भिन्न-भिन्न महात्माओं ने भिन्न-भिन्न लफ़्ज़ों से याद किया है। स्वामीजी महाराज उसे 'अनहद शब्द', 'मूल कलाम', 'शब्द', 'नाम', 'निर्मल नाद' आदि कह कर याद करते हैं। मुसलमान फ़कीरों ने उसे 'कलमा', 'बाँगे-आसमानी', 'कलामे-इलाही', 'निदाए सुलतानी', आदि कई लफ़्ज़ों से पुकारा है। गुरु नानक साहिब उसको 'गुरु की वाणी', 'सच्ची वाणी', 'अमर', 'अकथ कथा', 'हुकम', 'हरि-कीर्तन' आदि कह देते हैं। हज़रत ईसा ने उसको 'वर्ड' या 'लोगोस' कह दिया है। ऋषियों-मुनियों ने उसे 'आकाशवाणी', 'राम नाम', 'राम धुन', 'निर्मल नाद', 'दिव्य ध्वनि' आदि कह कर याद किया है। चीनी महात्माओं ने उसे 'ताउ' कह दिया है। हमें लफ़्ज़ों के वाद-विवाद में कभी नहीं उलझना चाहिये, हमें तो अपने शरीर के अन्दर उस नुक्ते या बिन्दु पर ख़याल को एकाग्र करना है जहाँ पर दाता दात दे रहा है, नाम रूपी अमृत बरस रहा है। महात्मा कहते हैं कि सुमिरन और ध्यान के द्वारा आँखों के पीछे ख़याल को इकट्ठा करो, यह तुम्हारे घर का दरवाज़ा है, इस घर के दरवाज़े को खोलो। तब तुमको अपने घर जाने का रास्ता मिलेगा, जिस रास्ते पर चल कर अपनी मंज़िले-मकसूद पर पहुँच सकते हो। वह कौन-सा घर अथवा मार्ग है? वह शब्द की कमाई है, नाम की कमाई है। स्वामीजी दावे से कहते हैं कि **'लग शब्द अनाहद जाई।'** भाई, अगर तू मुक्ति प्राप्त करना चाहता है, जन्म-मरण के दुःखों से छुटकारा चाहता है तो अपने ख़याल को उस सच्चे नाम से जोड़, सच्चे शब्द से जोड़।

ग्रन्थों-पोथियों, वेदों-शास्त्रों में महात्मा केवल उस सच्चे शब्द और सच्चे नाम की महिमा लिख देते हैं, इनको पढ़ने से नाम की कमाई करने का तरीका अथवा साधन का पता लग जायेगा, नाम की कमाई का शौक और प्यार पैदा हो जायेगा, परन्तु आपका ख़याल शब्द या नाम के साथ नहीं जुड़ेगा। सत्संग में हम शब्द की चर्चा कर रहे हैं, शब्द का ज़िक्र कर रहे हैं, लेकिन सत्संग सुन लेने से तो किसी का

ख़याल नाम के साथ नहीं जुड़ता। जो कुछ हम सुनते हैं, उस पर अमल करने से ही हमारा ख़याल नाम से जुड़ता है। डाक्टर की पुस्तकों में हर प्रकार की बीमारी के नुस्खे लिखे हुए होते हैं, पर दवाई तो डाक्टर की अलमारी में होती है। अगर कोई बीमार सारा दिन डाक्टर की पुस्तकें लेकर पढ़ता रहेगा, वह जितनी इच्छा पढ़ता रहे, पढ़वाता रहे, उसको बीमारी से तो कभी आराम नहीं आ सकता। जब तक डाक्टर के पास जाकर, दवाई लेकर, शरीर में नहीं डालता, डाक्टर का बताया हुआ परहेज़ नहीं करता, उसके शरीर से बीमारी किस प्रकार दूर हो सकती है? आप सारा दिन भोजन बनाने की पुस्तक पढ़ते रहें, पढ़वाते रहें, न आपका पेट भरेगा, न ही आपको स्वाद आयेगा। आप सारा दिन रेलवे का टाईम-टेबल खोलते रहें, पढ़ते रहें, पढ़वाते रहें, आप घर में ही बैठे रहेंगे, आपका सफ़र कभी तय नहीं हो सकेगा। ग्रन्थों-पोथियों को पढ़ना ज़रूरी है, परन्तु पढ़ने के बाद हमारा कर्तव्य समाप्त नहीं होता, बल्कि जो कुछ हमने पढ़ा है उस पर अमल भी करना है। अमल किस प्रकार करना है? **'लग सबद अनाहद जाई।'** हमें सुमिरन और ध्यान के द्वारा ख़याल को आँखों के पीछे इकट्ठा करके अन्दर अनहद शब्द का स्वाद प्राप्त करना है, उस नाम का स्वाद प्राप्त करना है। कल गुरु नानक साहिब के शब्द में आया था:

नउ दरवाजे दसवै मुकता, अनहद सबदु वजावणिआ ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ. ११०)

गुरु साहिब ने समझाया था कि आँखों के नीचे-नीचे इन्द्रियों के भोग हैं, विषय-विकारों के स्वाद हैं। परन्तु मुक्ति का दरवाज़ा मालिक ने आँखों के पीछे रखा है, जिसकी एक निशानी भी रखी है। वह निशानी क्या है? **'अनहद सबदु वजावणिआ।'** उस स्थान पर हरएक के अन्दर अनहद शब्द धुनकारें दे रहा है। जब तक हमारी सुरत आँखों के पीछे आकर उस अनहद शब्द को नहीं पकड़ती, तब तक हमारा किसी का भी मुक्ति प्राप्त करने का सवाल ही पैदा नहीं हो सकता। गुरु नानक साहिब कहते हैं—**'बिनु सबदै अंतरि आनेरा ॥ न**

वसतु लहै न चूकै फेरा ।।' (आदि ग्रन्थ, पृ. १२४)। उस शब्द और नाम की कमाई के बिना न तो किसी के अन्दर से अज्ञानता का अँधेरा दूर होता है, न किसी को परमात्मा मिलता है तथा न ही किसी का देह के बन्धनों से छुटकारा होता है। जो कुछ भी प्राप्त होना है, उस शब्द और नाम की कमाई से ही मिलना है! कबीर साहिब कहते हैं :

"यह तन है कागद की पुड़िया, बूँद पड़त गल जाओगे।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, इक नाम बिना पछताओगे।।"

जब आप कागज़ की पुड़िया पर पानी डालते हैं, कागज़ गल जाता है। इसी प्रकार यह जो देह है, इसे भी अग्नि के सुपुर्द होकर जल जाना है, मिट्टी के सुपुर्द होकर गल जाना है यदि इस देह में बैठकर अपने ख़याल को शब्द और नाम से नहीं जोड़ेंगे, कबीर साहिब कहते हैं, हमें अन्त में मृत्यु के समय पछताना पड़ेगा कि अपने बहुमूल्य समय को व्यर्थ की बातों में फँस कर बर्बाद कर दिया। क्यों पछताना पड़ता है ? क्योंकि बार-बार जन्म-मरण के दुःखों में आना पड़ता है। कबीर साहिब वाणी में नाम की यहाँ तक महिमा करते हैं—

नाम जपत कुष्टी भला, चुइ चुइ पड़े जिस चाम ।
कंचन देह केहि काम की, जा मुख नाहीं नाम ।।

यदि कोई कोढ़ी शब्द और नाम की कमाई में लगा हुआ है, वह लाख दरजे उस मनुष्य से अच्छा है जो सोने की देह, भाव संसार के सब हार-श्रृंगार लिये बैठा है लेकिन नाम को भूले बैठा है; क्योंकि जो कुछ मिलना है, वह शब्द की कमाई से मिलना है, नाम की कमाई से मिलना है। इसलिए महात्मा हमारे अन्दर शब्द और नाम की कमाई करने का शौक पैदा करते है।

यह शब्द और नाम भी कहीं बाहर नहीं है। यह सबके शरीर के अन्दर है। गुरु अमरदास साहिब कहते हैं—

सरीरहु भालणि को बाहरि जाए ।।
नामु न लहै बहुतु वेगारि दुखु पाए ।।

(आदि ग्रन्थ, पृ. १२४)

कि जो लोग देह और शरीर को बाहर उस नाम रूपी वस्तु को ढूंढने का प्रयत्न करते हैं, वे तो बेगारियों की तरह अपने बहुमूल्य समय को नष्ट कर रहे हैं। बेगारी कौन होते हैं ? जो सारा दिन मेहनत करते हैं थक कर चूर हो जाते हैं, खून-पसीना भी एक कर देते हैं परन्तु जिनके हाथ या पल्ले कुछ भी नहीं पड़ता। देख लें, अगर कोई चीज़ हमारे घर में खो जाये, हम घर के अन्दर जाकर खोज करेंगे, तभी हम उस वस्तु को पा सकेंगे। अगर हम उसको मन्दिरों, गुरुद्वारों, गिरजों में, जंगलों-पहाड़ों में, हिमालय में खोज करने लगें, हम उस वस्तु को पा कैसे सकते हैं। गुरु नानक साहिब कहते हैं : **'घरि रतन लाल बहु माणक लादे, मनु भ्रमिआ लहि न सकाईऐ ॥'** (आदि ग्रन्थ, पृ. ११७९) हमारे घर अर्थात शरीर में परमात्मा ने नाम के अनगिनत खजाने रखे हुए हैं, परन्तु हमारा मन बाहर के वहमों-भ्रमों को नहीं छोड़ता, कर्मकाण्ड को नहीं छोड़ता, शरीर के अन्दर जा कर उसकी तलाश नहीं करता। फिर हमारा मन उस दौलत को प्राप्त कैसे कर सकता है ?

हम सोचते हैं, शायद ग्रन्थों-पोथियों, वेदों-शास्त्रों आदि के पढ़ने से मुक्ति हो जाती है, रोज़ सत्संग सुनने से ही मुक्ति मिल जाती है, सरोवरों में स्नान करने से ही मुक्ति मिल जाती है। गुरु नानक साहिब कहते हैं कि बाहर का पानी चाहे कितना भी साफ-सुथरा क्यों न हो, वह हमारे शरीर का मैल उतार देगा, परन्तु जो हमारे पापों का, कर्मों का मैल है, वह पानी से धोने से कैसे साफ हो सकता है ? वह तो शब्द की कमाई से दूर होगा, नाम की कमाई से दूर होगा। हम बाहर के सरोवरों में स्नान करना मुक्ति का साधन समझते हैं। परन्तु गुरु अमरदास जी साहिब कहते हैं :

एहु सरीरु सरवरु है संतहु, इसनानु करे लिव लाई ॥
नामि इसनानु करहि से जन निरमल सबदे मैलु गवाई ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ. ९०९)

आप फ़रमाते हैं कि आपको संसार में इस शरीर से बड़ा और कोई सरोवर नहीं मिलेगा। यदि आप परमात्मा से प्यार करना चाहते

हैं तो इसमें जाकर स्नान करें। परन्तु शरीर के अन्दर कौन-सा स्नान करना है? शब्द का स्नान करना है, नाम का स्नान करना है। जब तक हमारी आत्मा शरीर के अन्दर जाकर नाम और शब्द का स्नान नहीं करती, इन कर्मों का सिलसला किस प्रकार समाप्त हो सकता है, आत्मा के ऊपर से मैल और गन्दगी के गिलाफ किस तरह दूर हो सकते हैं?

और हम क्या करते हैं? लम्बी-लम्बी जटाएँ रख लेते हैं, शरीर पर भभूत लगाना शुरू कर देते हैं। आप देखें, इन साधनों से हमें अन्दर क्या प्राप्त हो सकता है? स्वामीजी महाराज कहते हैं कि भाई मालिक से मिलने का केवल एक ही उपाय है, 'लग शब्द अनाहद जाई।' कि अपने अन्तर में अनहद शब्द को पकड़, अनहद शब्द से ख़याल जोड़। जब तक तू अन्दर अनहद शब्द को नहीं पकड़ता बाहर जितना मरज़ी तू किसी चीज़ को भी मत्थे टेकता रह, तेरे हाथ पल्ले कुछ भी नहीं पड़ेगा। इसलिये महात्मा हमें बाहर के वहमो, भ्रमों, संकल्पों में से निकालते हैं और हमारे ख़याल को अन्दर शब्द की ओर ले जाते हैं, नाम की ओर ले जाते हैं।

बिन शब्द उपाव न दूजा। काया का छूटे न कूजा॥

अब मन में ख़याल आता है कि क्या और भी कोई उपाय है, और भी कोई साधन है कि जिससे हम देह के बंधनों से छुटकारा प्राप्त कर सकें? स्वामीजी महाराज बड़ा ज़ोर देकर समझाते हैं, 'बिन शब्द उपाव न दूजा।' भाई, नाम या शब्द की कमाई के सिवाय कोई उपाय, कोई तरीका नहीं कि तू देह के बंधनों से छुटकारा प्राप्त कर सके। बाकी जितने भी साधन तू करता है, उनका फल तुझे ज़रूर मिल जायेगा। उन साधनों के कारण हम सेठ-साहूकार बन जायेंगे, राजा-महाराजा बन जायेंगे, जाति, धर्म, देश का शासन प्राप्त करके आ जायेंगे, ज़्यादा से ज़्यादा बैकुंठों और स्वर्गों तक चले जायेंगे। पर इन साधनों से कभी भी देह के बन्धनों से छुटकारा नहीं हो सकेगा। गुरु अमरदास जी कहते हैं, 'बिनु नावै होर पूज न होवी, भरमि भुली

लोकाई ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. ९१०) कि शब्द और नाम की कमाई के बिना कोई मालिक की भक्ति नहीं है, कोई मालिक की पूजा नहीं है। व्यर्थ ही दुनिया के जीव वहमों-भ्रमों में फँस कर भूले फिरते हैं। आप सोचें, यदि शब्द और नाम की कमाई ही मालिक की एकमात्र भक्ति है, तो ग्रन्थों-पोथियों, वेदों-शास्त्रों के पढ़ने से क्या लाभ हुआ, सरोवरों में स्नान करने का, जप, तप, पूजा-पाठ करने का क्या लाभ हुआ, जटा रखने का, भभूत लगाने का क्या लाभ हुआ, माथे टेकने, मन्दिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों में जाने का क्या लाभ हुआ, बेटे बेटियों को छोड़ने का क्या फायदा हुआ ? गुरु नानक साहिब कहते हैं : **"नामु बिसारि चलहि अन मारगि अंत कालि पछुताही ॥"** (आदि ग्रन्थ, पृ. ११५३) कि आप नाम की कमाई करने का तरीका छोड़ कर जिस भी मार्ग पर चलने की कोशिश करेंगे, अंत में मृत्यु के समय पछताना पड़ेगा कि हमने व्यर्थ अपने बहुमूल्य समय को नष्ट कर दिया। क्यों पछताना पड़ता है ? **"विणु नावै दरि ढोई नाही ता जमु करे खुआरी ॥"** (आदि ग्रन्थ, पृ. ७५४) शब्द और नाम की कमाई के बिना आपको कभी मालिक के घर जाने की इजाज़त नहीं मिलेगी, यमदूतों के हाथों खराब होना पड़ेगा। गुरु साहिब बड़े सुन्दर ढंग से उदाहरण देकर समझाते हैं : **अनिक करम कीए बहुतेरे ॥ जो कीजै सो बंधनु पैरे ॥'** (आदि ग्रन्थ, पृ. १०७५) हम मन-बुद्धि से देह के बन्धनों से छुटकारा प्राप्त करने के लिए जितने भी साधन और तरीके सोचते हैं, ये साधन हमें अच्छी तरह देह के बन्धनों में मज़बूती से जकड़ देते हैं। किस प्रकार जकड़ देते हैं ? **'कुरुता बीज बीजे नही जंमै सभु लाहा मूलु गवाइदा ॥'** (आदि ग्रन्थ, पृ. १०७५) यदि आप ज़मीन में बे-मौसम का बीज बोते रहेंगे तो चाहे कितना ही अच्छा बीज क्यों न हो, आप चाहे कितनी ही खाद डालें, पानी दें, रखवाली करें, वह फसल कभी किसी के घर में नहीं पहुँचती।

सब किसानों को पता है कि अक्तूबर और नवम्बर के महीने में गेहूँ बोया जाता है। अगर कोई मई और जून की धूप में गेहूँ बोयेगा,

वह जितना मरज़ी हल चला ले, खाद डाले, फ़सल तो कभी उसके घर नहीं आ सकती। गुरु साहिब कहते हैं: **कलजुग महि कीरतनु परधाना ॥ गुरमुखि जपीऐ लाइ धिआना ॥**' (आदि ग्रन्थ, पृ. १०७५) कलियुग में महात्मा ने केवल उस कीर्तन की महिमा की है, जिसको गुरुमुख लोग बड़े ध्यान से अपने अन्तर में सुनते हैं। यह बाहर का कीर्तन नहीं है। यह शब्द और नाम रूपी कीर्तन सबकी आँखों के पीछे दिन-रात धुनकारें दे रहा है। इसी बात को स्पष्ट करते हुए गुरु अमरदासजी फ़रमाते हैं:

इसु जुग का धरमु पड़हु तुम भाई ॥ पूरै गुरि सभ सोझी पाई ॥
ऐथै अगै हरि नामु सखाई ॥ (आदि ग्रन्थ, पृ. २३०)

चार युग एक-दूसरे के बाद चक्कर लगा रहे हैं, सतयुग है, त्रेता है, द्वापर है, कलियुग है। प्रत्येक युग में जीवन की भिन्न-भिन्न परिस्थितियाँ हैं। सतयुग में हमारी आयु बहुत लम्बी होती थी, हमारा स्वास्थ्य भी अच्छा होता था, हमारा ख़याल भी संसार में फैला हुआ नहीं था, थोड़े से परिश्रम से हमारा ध्यान मालिक की भक्ति की ओर लग जाता था। जैसे-जैसे युग बदलते गये, हमारी आयु भी छोटी होती गई, स्वास्थ्य भी बिगड़ता गया और ख़याल भी संसार में फैलता गया। जो साधन हमें सतयुग में काम देते थे, वे अब कलियुग में नहीं दे सकते। आजकल तो कोई भाग्यशाली जीव ही सत्तर-अस्सी वर्ष बिताकर जाता है। स्वास्थ्य भी इतना बिगड़ गया है कि हम लगातार एक-डेढ़ घण्टा भी एक आसन पर बैठ कर मालिक की भक्ति नहीं कर सकते। ख़याल भी इतने फैले हुए हैं कि हम पाँच मिनिट भी किसी बात पर एकाग्र होकर विचार नहीं कर सकते। इसलिए गुरु साहिब प्यार से समझाते हैं कि अगर तुम कलियुग में जीवन के चार दिन शान्ति से गुज़ारना चाहते हो और वापिस जाकर परमात्मा से मिलना चाहते हो, तो केवल नाम की कमाई करो, शब्द की कमाई करो जो लोग उठते-बैठते, चलते-फिरते शब्द और नाम से ख़याल जोड़कर रखते हैं, वे सदा के लिए मर जाते हैं। उनको बार-बार जन्म-मरण के

दुःखों में नहीं आना पड़ता। गुरु अमरदासजी फ़रमाते हैं:

नामि रते परम हंस बैरागी निजघरि ताड़ी लाई हे ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ. १०४६)

जो लोग उठते-बैठते चलते-फिरते नाम के रंग में रच जाते हैं, नाम के रंग में रंग जाते हैं, वे 'परमहंस बैरागी' बन जाते हैं। परमहंस बैरागी कब बनते हैं? जब हम मन और माया के दायरे से पार हो जाते हैं; जब हमारी आत्मा के ऊपर से सभी गन्दे-गन्दे गिलाफ़ उतर जाते हैं। आप फ़रमाते हैं:

सबदि मरै सोई जनु पूरा ॥ सतिगुरु आखि सुणाए सूरा ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ. १०४६)

कि हमारे सूरमा, बहादुर सतिगुरु ने हमें यही उपदेश दिया है कि जो उठते-बैठते, चलते-फिरते अन्दर ख़याल को शब्द और नाम से जोड़ कर रखता है, वह पूर्ण हो जाता है और पूर्ण परमात्मा में समाने के योग्य हो जाता है। गुरु नानक साहिब बड़ा सुन्दर उदाहरण देते हैं।

सूहटु पिंजरि प्रेम के बोलै बोलणहारु ॥
सचु चुगै अंमृतु पीऐ उडै त एकावार ॥ (आदि ग्रन्थ, पृ. १०१०)

हमारा शरीर एक पिंजरा है। हमारी आत्मा तोता है। जिस प्रकार तोता पिंजरे से प्यार करके तरह-तरह की बोलियाँ बोलता है, उसी प्रकार हमारी आत्मा भी इस शरीर से प्यार किये बैठी है। इस शरीर के अन्दर बैठ कर लोगों के शरीरों से प्यार किये बैठी है तथा कई प्रकार की बोलियाँ बोलती है। कभी अच्छी बोली बोलती है, कभी मन्दी बोली बोलती है। देह में बैठकर कभी हम हँसते हैं, कभी रोते हैं। गुरु नानक साहिब कहते हैं कि यदि तोता पिंजरे का प्यार छोड़ दे, तो वह पिंजरे की कैद से आज़ाद हो जाये। यदि हमारी आत्मा इस शरीर का प्यार छोड़ देगी तो यह देह के बन्धनों से मुक्त हो जायेगी। परन्तु तोता पिंजरे का प्यार किस प्रकार छोड़ सकता है? गुरु साहिब कहते हैं; 'सचु चुगै अंमृतु पीऐ उडै त एकावार ॥' हरएक की आँखों के पीछे परमात्मा ने सच का चोगा रखा हुआ है।

जब आँखों के पीछे आकर उस सच या शब्द के चोगें को चुगना शुरू कर देंगे, 'उडै त एका वार', हम सदा के लिए देह के बन्धनों से मुक्त हो जायेंगे। जो चीज़ हमें देह के बन्धनों से मुक्त करती है, वह शब्द की कमाई है, नाम की कमाई है। इसलिए स्वामीजी कहते हैं, 'बिन शब्द उपाव न दूजा।' भाई, शब्द और नाम की कमाई के बिना कोई उपाय नहीं है, कोई साधन नहीं है कि तू देह के बन्धनों से छुटकारा पा सके।

घर में घर गुरु दिखलावें। धुन शब्द पाँच बतलावें ।।

स्वामीजी महाराज कहते हैं, 'घर में घर गुरु दिखलावें।' यह घर कौन-सा है? हमारा शरीर है। वह घर कौन-सा है? जिस जगह परमात्मा रहता है। जिस परमात्मा की सब को खोज है, वह परमात्मा कहीं बाहर नहीं है, वह हमारी देह और शरीर में है। यदि कोई प्रयोगशाला है, जिसके अन्दर जा कर ही हम मालिक की खोज कर सकते हैं तो वह केवल हमारा शरीर, हमारी देह और हमारा वजूद है। हज़रत ईसा ने समझाया था, "रिपेन्ट किंगडम आफ़ गाड इज़ एट हेंड।" जो कुछ पिछले जन्मों में कर्म कर बैठे हो, उनका पश्चाताप करो, उनका हिसाब-किताब करो, परमात्मा कहीं बाहर नहीं है, वह तुम्हारी देह और शरीर में बैठा हुआ है। गुरु अमरदास जी कहते हैं, **'काइआ अंदरि जगजीवन दाता वसै, सभना करे प्रतिपाला ।।'** (आदि ग्रन्थ, पृ. ७५४)। वह परमेश्वर जिसने सारे जग को जीवन दिया है, जो सबका दाता और बादशाह है, जो सबकी सँभाल और सबका पालन करता है, वह परमेश्वर इस काया, देह या शरीर में बैठा हुआ है। कबीर साहिब कहते हैं :—

जिऊ तिल में तेल है, चकमक में आग।
तेरा प्रीतम तुझ में, जाग सके तो जाग ।।

जिस प्रकार तिलों के अन्दर तेल होता है, पत्थर के अन्दर अग्नि होती है, उसी प्रकार वह परमात्मा भी हमारे शरीर के अन्दर है। पलटू साहिब कहते हैं, 'साहिब साहिब क्या करे, साहिब तेरे पास।' कि तुम

किस परमात्मा को जंगलों-पहाड़ों में ढूंढते फिर रहे हो। वह परमात्मा न कहीं आसमान के पीछे छिपा हुआ है, न वह ईंटों-पत्थरों में मिलेगा, न कभी सरोवरों-नदियों में मिलेगा। वह परमात्मा चौबीस घण्टे तुम्हारे साथ-साथ घूम रहा है। गुरु नानक साहिब कहते हैं, 'सदा हजूरि दूरि न जाणहु ॥ गुर सबदी हरि अंतरि पछाणहु ॥' (आदि ग्रन्थ, ११६)। वह परमात्मा चौबीस घण्टे तुम्हारे साथ है। गुरुमुखों के पास जाकर, शब्द की कमाई करके अपने शरीर के अन्दर ही मालिक को पहचानने की कोशिश करो।

महात्मा कहते हैं कि यदि कोई सच्चे से सच्चा गुरुद्वारा है, मन्दिर है, मस्जिद है, ठाकुरद्वारा है तो वह केवल हमारा शरीर, हमारी देह, हमारा वजूद ही हो सकता है। ऋषियों-मुनियों ने इसे 'नर-नारायणी' देह कह कर समझाने का प्रयत्न किया है। यह वह शरीर है, जो उस नारायण ने स्वयं पैदा किया है, जिसके अन्दर वह नारायण स्वयं बैठा हुआ है और जिसके अन्दर ही हमारी आत्मा को नारायण या परमात्मा होने का गौरव प्राप्त हो सकता है। हज़रत ईसा ने हमारे शरीर को 'जीवित परमात्मा का मंदिर' कह कर याद किया है। गुरु नानक साहिब तो साफ़ कह रहे हैं, 'हरि मंदरु एहु सरीर है, गिआनि रतनि परगटु होइ ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. १३४६)। कि केवल हमारा शरीर ही मालिक के रहने का असली हरि-मन्दिर है। जब भी हमें उस मालिक से मिलने का ज्ञान होगा, केवल अपने शरीर के अन्दर से ही होगा।

मन में विचार आता है, यदि वह परमात्मा हमारे शरीर के अन्दर है, तो वह हमें दिखाई क्यों नहीं देता? हम आँखें बन्द करते हैं, हमें तो अपने अन्दर अँधेरा ही अँधेरा दिखाई देता है। गुरु नानक साहिब कहते हैं, 'एका संगति इकतु गृहि बसते मिलि बात न करते भाई ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. २०५)। दोनों इकट्ठे रहते हैं, दोनों का एक ही घर में निवास है, परन्तु आपस में मिलाप नहीं है। आत्मा भी इसी शरीर में है, परमात्मा भी इसी शरीर में है। न कभी आत्मा ने परमात्मा के दर्शन किये, न कभी आत्मा सुहागिन हुई। गुरु साहिब कारण बताते

हैं, 'अंतरि अलखु न जाई लखिआ, विचि पड़दा हउमै पाई ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. २०५)। कि भाई, परमात्मा तेरे शरीर के अन्दर है, तुझे दिखाई इसलिए नहीं देता कि तेरे और परमात्मा के बीच हौमैं की रुकावट है, खुदी की रुकावट है।

हौमैं क्या है? यह जो हम सारा दिन सोचते रहते हैं कि यह मेरी सम्पत्ति है, मेरी सन्तान है, मेरी जाति है, मेरा धर्म है, मेरा देश है, यही हौमैं है। जिनको सारा दिन मेरा-मेरा कहते रहते हैं, वह सब-कुछ ही उस परमात्मा का है। हम अपने आपको परमात्मा से अलग समझे बैठे हैं और इनको अपना बनाने की कोशिश करते हैं। ये न तो आज तक कभी किसी के बने हैं, न कभी बन ही सकते हैं। परन्तु जो इन्हें अपना बनाने की कोशिश करते हैं, वह कोशिश हमें इनके मोह और प्यार में फँसा देती है। 'जहां आसा तहां बासा।'। इनका मोह हरएक को देह के बन्धनों की ओर खींच कर ले आता है, क्योंकि जिधर हमारा सारी उमर ख़याल रहता है, हम मौत के बाद उसी धारा में बहना शुरू कर देते हैं।

कौन-सी चीज़ हमें बार-बार देह के बन्धनों में लाई? संसार का मोह और प्यार लाया। यह किसने पैदा किया? हमारे मन ने पैदा किया। गुरु नानक साहिब कहते हैं, 'मन जीते जगु जीतु ॥' कि भाई, अगर तू मन को जीत लेगा, तू सारे संसार के बनाने वाले को ही जीत लेगा। आप सोचें, यह हमारा मन ही तो है जिसके अधीन होकर भाई, भाई का दुश्मन है; राष्ट्र, राष्ट्र का दुश्मन है; धर्म, धर्म का दुश्मन है। किस प्रकार रोज़ एक-दूसरे के गले काटने की योजनाएँ और उपाय हम सोचते रहते हैं। यह हमसे कौन करवा रहा है? हमारा मन करवा रहा है। जब तक हम मन पर हावी नहीं होते, मन को अपने अधीन नहीं करते, अपने रास्ते से मन की रुकावट दूर नहीं करते, बेशक परमात्मा सबके अन्दर बैठा हुआ है, पर हम अपने अन्दर उस परमात्मा को कभी प्राप्त नहीं कर सकते। सो हमें जो भी कोशिश करनी है, अपने रास्ते से मन की रुकावट दूर करने की करनी है।

मन की रुकावट को रास्ते से दूर करने का क्या मतलब है ? मैंने विनती की थी कि हमारी आत्मा और मन की गाँठ बँधी हुई है। जिस प्रकार हमारी आत्मा उस परमात्मा का अंश है उसी प्रकार हमारा मन भी कोई छोटी चीज़ नहीं है। यह भी ब्रह्म का अंश है, त्रिकुटी का रहने वाला है, परन्तु विषय-विकारों में फँस कर अपने आपको खो बैठा है, अपने असल को खो बैठा है, अपने मूल को भूल चुका है। जो-जो कर्म मन करता है, उसका परिणाम साथ-साथ हमारी आत्मा को भी भुगतना पड़ता है। जब तक हमारी आत्मा मन का साथ नहीं छोड़ती, न आत्मा को अपने आप की समझ आ सकती है, न अपने असल की समझ आ सकती है। इसीलिए सुकरात ने कहा था, 'अपने आप को पहचानो'। गुरु नानक साहिब कहते हैं : 'सो जनु निरमलु जिनि आपु पछाता' (आदि ग्रन्थ, १०४६) वे मनुष्य निर्मल हैं, पवित्र हैं, जो अपने आपको पहचानने के योग्य बन जाते हैं। हम अपने आपको कब पहचानते हैं ? जब हम मन और माया के दायरे से पार चले जाते हैं, जब हमारी आत्मा के ऊपर से सभी गन्दे-गन्दे पर्दे उतर जाते हैं, जब हमारी आत्मा और मन की गांठ खुल जाती है।

मैंने अर्ज़ की थी कि आत्मा तो निर्मल थी, पवित्र थी, परन्तु मन का साथ लेने के कारण अति गन्दी और मैली हो चुकी है। आप देखें, बादलों के अन्दर पानी कितना साफ़-सुथरा होता है। जब बरसात बन कर धरती पर आता है, कितनी गन्दगी इकट्ठी कर लेता है और अपने आपको गन्दगी का भाग समझना शुरू कर देता है। जब उसे सूर्य का ताप या गर्मी मिलती है, वह भाप बन कर गन्दगी को छोड़ता है, उसे होश आ जाता है कि गन्दगी कोई और चीज़ है, मैं कोई और चीज़ हूँ, मैं व्यर्थ ही गन्दगी का साथ लेकर अपने-आप को गन्दगी समझे बैठा था। जब गन्दगी से अलग होता है, फिर पता लगता है कि मेरा असल, मेरा मूल आकाश के बादल हैं; सीधा जाकर बादलों में समा जाता है। यह हम सबकी आत्मा की अवस्था है। यह परमात्मा का अंश है। परन्तु मन के अधीन होकर कर्मों के जाल में फँस चुकी

है। जब तक यह मन का साथ नहीं छोड़ेगी, न कभी आत्मा को अपने आपकी समझ आ सकती है, न उसे अपनी वास्तविकता की समझ आ सकती है।

आप देखें, एक बिजली का बल्ब कितना प्रकाश देता है। यदि पन्द्रह-बीस काले रंग के कपड़े उसके चारों ओर लपेट दें, उसका प्रकाश दिखाई नहीं देता। न हम उसका प्रकाश देख सकते हैं, न ही उससे कोई फ़ायदा उठा सकते हैं। काले कपड़े लपेटने से बल्ब का प्रकाश कम नहीं हुआ। अगर कपड़े उतार दें, तो प्रकाश देख भी सकते हैं, उससे पूरा-पूरा फायदा भी उठा सकते हैं।

आप देखें, हीरा कितना बहुमूल्य होता है, उसमें कितनी चमक होती है। आप उसे मिट्टी में फेंक दें; न तो उसके मूल्य का पता चलता है, न उसकी चमक दिखाई देती है। मिट्टी लगने से हीरे का मूल्य कम नहीं होता, चमक कम नहीं होती। मिट्टी धोनी पड़ती है, फिर उसका मूल्य भी प्राप्त कर सकते हैं, उसकी चमक भी देख सकते हैं। महात्मा समझाते हैं कि हमारी आत्मा निर्मल है, पवित्र है, क्योंकि वह परमात्मा का अंश है, परन्तु मन का साथ लेने के कारण अति गन्दी और मैली हो चुकी है। जो भी कोशिश करनी है, जो भी तरीका सोचना है, आत्मा और मन की गाँठ को खोलने का सोचना है।

अब हम सब संसार के जीव हज़ारों ही युक्तियों और साधनों से मन को वश में करने का प्रयत्न करते हैं। जप-तप करते हैं, पूजा-पाठ करते हैं, दान-पुण्य करते हैं, घर-बार छोड़ कर जंगलों-पहाड़ों में जाकर छिप जाते हैं। मन्दिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों में भी जाते हैं, सत्संग भी सुनते हैं। ये सभी साधन, सभी तरीके हम केवल अपने मन को वश में करने के लिए ही करते हैं। हम हठ-कर्मों के द्वारा बलपूर्वक अपने ख़याल को दुनिया से निकालने की कोशिश करते हैं। आगे जाकर मन कहीं लगता नहीं, संसार में ही भटकना शुरू कर देता है।

बलपूर्वक मन को संसार से निकालना इस प्रकार है, जिस प्रकार आप एक साँप को पकड़ कर पिटारी में बन्द कर लेते हैं। पिटारी में

बन्द करने से न तो सांप के अन्दर से क्रोध जाता है, न विष जाता है, न रोष जाता है। जब तक वह पिटारी में बन्द है, आप उसके डंक से, विष से ज़रूर बचे हुए हैं, जब भी उसे पिटारी से बाहर निकलने का मौका मिलेगा, वह डंक ज़रूर मारेगा, कभी अपनी आदत से बाज़ नहीं आयेगा। यदि उसी साँप को पकड़ कर उसकी विष की थैली ही निकाल दें, वह साँप नुकसान नहीं पहुँचा सकता, चाहे उसे दिन भर गले में लटकाये फिरें। हम जंगलों-पहाड़ों में छिपकर, सत्संग सुनकर, ग्रन्थ-पोथियाँ, वेद-शास्त्र पढ़कर सोच लेते हैं कि हमारा मन बहुत निर्मल हो गया है, पवित्र हो गया है, परन्तु वही कामनायें, वही तृष्णायें हरएक के अन्दर दबी रहती हैं। जब मन का ज़ोर चलता है, वह फिर से अंगुलियों पर नचाना शुरू कर देता है बल्कि साधारण मनुष्यों से भी हमारी दशा बदतर और बुरी होनी शुरू हो जाती है। आप देखें, यदि हम एक बदमाश को पुलिस को सौंप आयें तो जब तक वह पुलिस की हिरासत में है, हम उसकी शरारतों से अवश्य बचे रहते हैं; जब उसको पुलिस छोड़ देती है तो वह बस्ती में आकर फिर वैसी ही शरारतें करनी शुरू कर देता है। यदि हम उसे पुलिस के हवाले करने की बजाये समझा कर भला मानस, नेक इन्सान बना लें, हम हमेशा के लिये उसकी शरारतों से बच जाते हैं। महात्मा समझाते हुए कहते हैं कि हठ-कर्मों के द्वारा मन की बुरी आदतों तथा शरारतों से थोड़े समय के लिए बच सकते हैं, सदा के लिये मन को वश में नहीं कर सकते।

यदि मन को सदा के लिए वश में करना चाहते हैं तो सबसे पहले मन की आदत और स्वभाव के सम्बन्ध में अच्छी तरह सोच और विचार करना पड़ेगा। हम देखते हैं कि हमारा मन लज़्ज़त का आशिक है, स्वाद का प्रेमी है। हम एक चीज़ से प्यार करते हैं, अगर हमें उससे साफ-सुथरी दूसरी चीज़ दिखाई दे तो हम पहली को छोड़कर दूसरी के पीछे दौड़ना शुरू कर देते हैं। कोई भी संसार का मोह, संसार का प्यार, हमारे मन को सदा के लिए लेकर खड़ा नहीं हो सकता। सारी

उमर को अपनी आँखों के सामने रखकर देखें, बचपन में हमारा माता-पिता से कितना प्यार होता था, दो मिनिट के लिए भी माता-पिता घर से दूर चले जाते थे, हम चीखना-चिल्लाना शुरू कर देते थे। जब दो-तीन भाई-बहन हो जाते हैं, हम उनके प्यार में लग जाते हैं, माता-पिता को भूलना शुरू कर देते हैं। जिस समय स्कूलों-कालेजों में जाते हैं, वही प्यार अपने दोस्तों-मित्रों से हो जाता है। शादी होती है, पत्नी, बाल-बच्चों से प्यार हो जाता है। वृद्ध होते हैं, जातियों, धर्मों, देशों तक फैल जाता है। एक प्यार है, कितनी शक्लें, कितने रूप बदलता है। परन्तु कोई भी प्यार सदा के लिए हमारे मन को लेकर खड़ा नहीं हो सकता।

महात्मा कहते हैं कि मन स्वाद का प्रेमी है। जब तक आप मन को संसार के मोह और प्यार से ऊँचा और निर्मल प्यार नहीं देंगे, यह संसार का मोह और प्यार छोड़ने को तैयार नहीं होगा। आप देखें, यदि कोई कौड़ियाँ माँगता फिरता हो, आप उसकी एक कौड़ी लेने की कोशिश करें, वह मरने-मारने के लिए तैयार हो जाता है। दस रुपये का नोट उसके हाथ में दे दें, उसकी कौड़ियों वाली मुट्ठी अपने आप ही ढीली हो जाती है। लड़कियाँ गुड़ियों से तब तक खेलती हैं, जब तक उनकी शादी नहीं होती। शादी के बाद कौन गुड़ियों की परवाह करता है। इसलिए महात्मा कहते हैं कि जब तक हमारे मन को संसार से ऊँचा और निर्मल प्यार नहीं मिलेगा, यह संसार का मोह और प्यार कभी छोड़ने को तैयार नहीं होगा। वह किस चीज़ का स्वाद है, किस चीज़ का प्यार है ? गुरु रामदास जी कहते हैं, '**नामु मिलै मनु तृपतीऐ, बिनु नामै धृगु जीवासु**॥' (आदि ग्रन्थ, ४०)। यह जो हमारा मन विषय-विकारों में फँस कर हिरन की तरह दिन-रात भटकता और तड़पता फिरता है, जिस समय इसको अन्दर अमृत से भरा हुआ नाम मिल जायेगा, इसकी तड़प खत्म हो जायेगी। उस नाम का स्वाद इतना ऊँचा और निर्मल है कि उस स्वाद को प्राप्त करके हमारा मन अपने आप इन्द्रियों के भोगों, विषयों-विकारों, शराबों-कबाबों को छोड़

देगा। जिनको हीरे-जवाहरात मिल जाते हैं, वे फिर कौड़ियों के पीछे दर-वदर ठोकरें नहीं खाते। मैंने विनती की थी कि लड़कियाँ तब तक ही गुड़ियों से खेलती हैं जब तक उनकी शादी नहीं होती। केवल आसक्ति या प्यार ही हमारे अन्दर अनासक्ति या वैराग्य पैदा कर सकता है, त्याग कभी किसी के अन्दर प्यार पैदा नहीं कर सकता। यदि किसी लड़की को शादी से पूर्व समझाने की कोशिश करें—कि देख बेटी, तेरी शादी की तारीख रख दी गई है, तू अब माता-पिता का प्यार छोड़ दे, बहन-भाई का प्यार छोड़ दे, सखी-सहेलियों का प्यार छोड़ दे, तो वह बेचारी कितनी ही कोशिश करे, कभी सफल नहीं हो सकती। जिस समय उसकी शादी हो जाती है, पति से उसका प्यार हो जाता है, तब वह माता-पिता को भी भूल जाती है, बहन-भाई को भी भूल जाती है, सखी-सहेलियों को भी भूल जाती है। एक आदमी के मोह और प्यार ने सारे संसार का मोह और प्यार उसके अन्दर से निकाल दिया। यही हमारे मन की आदत है। यह भी ऊँचे स्वाद को पाकर नीचे स्वाद को छोड़ देता है। जब इसे शब्द का स्वाद मिल जाता है, नाम का स्वाद मिल जाता है, इसका ख़याल अपने आप विषय-विकारों में से निकल जाता है।

मैंने अर्ज़ की थी, हमारे शरीर के अन्दर आत्मा और मन का जो स्थान है, वह यहाँ आँखों के पीछे है। जब हम नौ द्वारों में से सुमिरन और ध्यान के द्वारा ख़याल यहाँ लाकर अन्तर में शब्द का स्वाद लेते हैं, तब हमारे मन का झुकाव नीचे से ऊपर की ओर हो जाता है। फिर यह मन नीचे इन्द्रियों के भोगों की ओर नहीं जाता। उस प्रकाश के द्वारा मन अपने घर के दरवाज़े पर आना शुरू कर देता है। फिर अपने आप ख़याल दुनिया से निकलना शुरू हो जाता है। उस शब्द का प्यार हमें संसार की ओर से उदास या अनासक्त करना शुरू कर देता है। जब मन शब्द के सहारे वापिस अपने ठिकाने पर पहुँच जाता है, आत्मा इसके पंजे से आज़ाद हो जाती है, आत्मा और मन की गाँठ खुल जाती है, फिर हम अपने आप को पहचानने के योग्य हो जाते

हैं, परमात्मा को पहचानने के योग्य बन जाते हैं।

इसलिए यहाँ स्वामीजी महाराज प्यार से समझाते हैं : **'घर में घर गुरू दिखलावें।'** संत-महात्मा, मालिक के भक्त और प्यारे समझाते हैं कि इस शरीर रूपी घर में बैठकर हमें अपने असली घर किस प्रकार पहुँचना है? वह कौन-सा मार्ग है जिस पर चलकर हमें अपना रूहानी सफर तय करते हुए वापिस अपने ठिकाने पर आ जाना है? वह कौन-सा उपाय और साधन है जिसके द्वारा मन की रुकावट को दूर करना है? आप फ़रमाते हैं : **'धुन शब्द पाँच बतलावें।'** कि पाँच शब्द, पाँच धुन हरएक के अन्दर आँखों के पीछे धुनकारें दे रही हैं जिनकी सहायता से रूहानी सफर तय करके हमें वापस घर पहुँचना है।

शब्द तो एक है, परन्तु वह पाँच मंज़िलों में से होकर आ रहा है, इसलिए आम संत-महात्माओं ने और स्वामीजी महाराज ने इसको पाँच शब्द या पांच नाम कह कर याद किया है। आप देखें, नदी एक स्थान से निकल कर समुद्र में जा कर समा जाती है। जिस स्थान से नदी निकलती है, उस स्थान की आवाज़ और तरह की होती है; जब खड्डों में से होकर निकलती है, आवाज़ बदल जाती है; जब झरना बनकर गिरती है फिर आवाज़ बदल जाती है; जब मैदान में फैलती है, तो आवाज़ बदल जाती है, जब समुद्र में समा जाती है तो और आवाज़ हो जाती है; परन्तु नदी हर स्थान पर एक ही होती है। इसी प्रकार वह शब्द एक ही है जो कि धुर से, सचखण्ड से उठकर सबकी आँखों के पीछे आ रहा है; परन्तु पाँच मंज़िलों में से होकर आ रहा है, इसलिए महात्मा ने पाँच शब्द या पाँच नाम कह कर इसका वर्णन किया है। गुरु नानक साहिब भी कहते हैं :—

घर महि घरु देखाइ देइ सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु ॥
पंच सबद धुनिकार धुनि, तह बाजै सबदु नीसाणु ॥

(आदि ग्रन्थ, १२९०)

कि जो महात्मा हमें घर के अन्दर से हमारे असली घर पहुँचा देता है, वही हमारा असली सतगुरु है। किस प्रकार पहुँचा देता है?

उसकी निशानी यह है कि वह सबकी आँखों के पीछे धुनकारें दे रही पाँच धुनों का ज्ञान देता है। उन पांच शब्दों के द्वारा हम वापिस अपनी मंज़िल या लक्ष्य पर पहुँच जाते हैं। कबीर साहिब ने भी पाँच शब्द का वर्णन किया है, मुसलमान फकीर भी पाँच शब्द का वर्णन करते हैं। सो हमें अपने ध्यान को आँखों के पीछे लाकर उस शब्द की लज़्ज़त प्राप्त करनी है, उस नाम की लज़्ज़त प्राप्त करनी है। वह लज़्ज़त इतनी ऊँची और निर्मल है कि उस नाम को पाकर हमारा मन अपने आप इन्द्रियों के भोगों, विषय-विकारों को छोड़ देगा।

धुन में अब सुरत लगावो। इस घर से उस घर जावो।।

आप समझाते हैं कि **'इस घर से उस घर जावो'**; इस शरीर रूपी घर में बैठकर हमें सचखण्ड रूपी निजघर की खोज कर लेनी चाहिए। उस घर को भूल कर हम दुःखी हो रहे हैं, मुसीबतों में घिरे हुए हैं। जितना इस घर में शांति और सुख ढूँढने की कोशिश करते हैं। उतना ही हम दुनिया के जीव दुःखी होते जा रहे हैं। क्यों दुःखी हो रहे हैं? क्योंकि जिन चीज़ों में सुख ढूँढते हैं, वे सभी नाशवान हैं, अस्थाई या आरज़ी हैं। इनका सुख और आराम भी थोड़े समय के लिए, आरज़ी और नाशवान ही हो सकता है। ये जो भी थोड़े-बहुत सुख दिखाई देते हैं, सब धीरे-धीरे दुःखों में परिवर्तित होने शुरू हो जाते हैं। शादी होती है, मन में कितनी खुशी होती है। उसी साथी से यदि अनबन शुरू हो जाये, घर नरक बन जाता है। सन्तान पैदा होती है, कितने पुण्य-दान करते हैं, दावते देते हैं, परन्तु हरएक का अनुभव है कि वही बाल-बच्चे कभी बीमार हो जाते हैं, कभी नालायक निकल जाते हैं, कभी परमात्मा इन्हें वापिस बुला लेता है। वही सन्तान हमारे लिये कितने दुःख का कारण बन जाती है। हम हुकूमत के नशे में सुख ढूँढते हैं। जब लोग हमारे जुलूस निकालते हैं, हमारी जय-जयकार करते हैं, हमारा मन फूला नहीं समाता। परन्तु उन नेताओं की कहानी भी हमें पता है कि किस प्रकार रातो-रात राज्य पलट जाते हैं, लोग गोलियों का शिकार बना देते हैं, जेलखानों में डाल देते हैं, पैरों के नीचे उनकी

मिट्टी पलीत करना शुरू कर देते हैं।

इन चीज़ों में हमें सदा रहने वाला सुख क्यों नहीं मिलता ? परमात्मा ने यह दुनिया दु:खों और सुखों की नगरी बनाई हुई है। स्वामी जी महाराज कहते हैं : **'तजो मन यह दुख सुख का धाम। लगो तुम चढ़ कर अब सतनाम ॥'** (सार बचन, ११९) कि यह दुनिया दु:खों और सुखों की नगरी है। आप इसमें सदा के लिये सुख और शान्ति नहीं ढूँढ सकेंगे। यदि आपको असली सुख और शान्ति प्राप्त करना है, तो 'सतनाम' भाव अपने वास्तविक घर, वापिस चलें। उस घर में पहुँच कर ही आप सच्चा सुख और सच्ची शांति प्राप्त कर सकेंगे। हमें अपने पिछले जन्मों के पुण्य और पाप के कारण मनुष्य का चोला मिलता है। हम इस देह में बैठकर पुण्य का हिसाब देते हुए सुखी हो जाते हैं, पापों का हिसाब देते हुए दु:खी हो जाते हैं। यदि हमारे केवल पुण्य होते, हम स्वर्गों में बैठे होते, यदि केवल पाप ही होते, नरकों में जलते होते। किसी के अधिक पुण्य हैं और थोड़े पाप हैं, जिस कारण वह ज़्यादा सुखी दिखाई देता है, थोड़ा दु:खी दिखाई देता है; किसी का पापों का बोझा अधिक है, पुण्य का कम है, वह ज़्यादा दु:खी और थोड़ा सुखी है; परन्तु दु:ख-सुख तो प्रत्येक जीव को शरीर में बैठकर भुगतने ही पड़ते हैं। महात्मा कहते हैं कि अगर हमेशा के लिये सुख प्राप्त करना है तो अपने असली घर की तलाश करें। गुरु रामदास साहिब कहते हैं : **'जिन्ही घरु जाता आपणा से सुखीए भाई ॥'** (आदि ग्रन्थ, ४२५) कि जो अपने घर पहुँच जाते हैं, सच्चा सुख और सच्ची शान्ति उन गुरुमुखों को ही प्राप्त होती है। जब तक हम परदेसियों की तरह, बेरोज़गारों की तरह इस दुनिया में मारे-मारे फिर रहे हैं, हम सुख किस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं ? हम अपने घर पहुँच कर ही सच्चा सुख प्राप्त कर सकेंगे। स्वामीजी महाराज प्यार से कहते हैं कि जब तक परमात्मा ने आपको इस शरीर के अन्दर बैठने का मौका दिया है, आपको अपने असली घर की खोज कर लेनी चाहिये, वापिस असली घर पहुँच जाना चाहिये। किस प्रकार घर जाना है ? 'धुन में

अब सुरत लगावो ।' सबकी आँखों के पीछे शब्द या नाम धुनकारें दे रहा है, उसमें सुरत को जोड़ें, उस शब्द को पकड़ें । उस शब्द की आवाज़ और प्रकाश के ज़रिये धीरे-धीरे अपना सफर तय करते हुए आप मंज़िले-मकसूद अर्थात लक्ष्य पर पहुँच जायेंगे ।

वह घर है अगम अपारा । दसवें के पार निहारा ।।
दस द्वारा घट चढ़ खोलो । सत शब्द अधर पै तोलो ।।

अब स्वामीजी महाराज फिर अन्दर के रूहानी सफर का इशारा करते हैं कि आपका रूहानी सफ़र पैरों के तलुओं से शुरू होकर सिर की चोटी तक जाता है । इस सफ़र की दो मंज़िलें हैं : एक आँखों तक है, एक आँखों से ऊपर है । आँखों के नीचे-नीचे इन्द्रियों के भोग हैं, विषय-विकारों के स्वाद हैं । जितनी देर आपका ख़याल आँखों से नीचे-नीचे है, आपको अपने घर का दरवाज़ा ही नहीं मिला, घर जाने का मार्ग ही नहीं मिला, जिसके कारण आप कभी अपना रूहानी सफ़र तय नहीं कर सकेंगे । जब सुमिरन और ध्यान के द्वारा आँखों के पीछे ख़याल इकट्ठा करेंगे, तब आपको घर का मार्ग मिलेगा, जिस मार्ग पर चलकर आपको रूहानी सफ़र तय करना है । फिर आपका ख़याल अन्दर उस शब्द और नाम के साथ जुड़ता है, जिस शब्द को पकड़ कर ही आप मंज़िल-दर-मंज़िल वापिस अपने घर की ओर जा सकेंगे ।

बिन मेहर गुरू नहिं पावे । बिन शब्द हाथ नहिं आवे ।।

स्वामीजी महाराज की सारी शिक्षा का सार एक पंक्ति में बयान किया जा सकता है, **'बिन मेहर गुरू नहिं पावे । बिन शब्द हाथ नहिं आवे ।'** आप कहते हैं कि शब्द और नाम की कमाई के बिना कोई कभी भी परमात्मा की प्राप्ति नहीं कर सकता । चाहे कितने ही यत्न तथा उपाय क्यों न करलें, आप गुरुमुखों के बिना शब्द और नाम की कमाई नहीं कर सकते । गुरुमुख घोल कर हमारे अन्दर कुछ नहीं डालते, उस परमात्मा ने शब्द और नाम की सम्पत्ति हमारे अन्दर, हमारे लिये रखी हुई है । गुरुमुख तो इशारा करते हैं, उपाय बताते हैं

कि किस उपाय और साधन के द्वारा हम अपने ख़याल को अन्दर शब्द और नाम से जोड़ सकते हैं। गुरु नानक साहिब बड़ा सुन्दर उदाहरण देते हैं।

'जिउ ओडा कूप गुहज खिन काढै तिउ सतिगुरि वसत लहाईऐ ।।'

(आदि ग्रन्थ, पृ. ११७६)

कि पुरानी आबादियों के नीचे बने-बनाये कुएँ मिट्टी के नीचे आकर दब जाते हैं। हम उस धरती पर चलते-फिरते हैं, हमें पता नहीं होता कि बना-बनाया कुआँ यहाँ मिट्टी के नीचे दबा हुआ है। 'ओड' वे सज्जन हैं जो कि अपने इल्म और विद्या से हमें समझा देते हैं कि इस स्थान पर धरती की खुदाई करो, तुम्हें बना-बनाया कुआँ मिल जायेगा। वे कुआँ लगा कर, मिट्टी से दबा कर, खबर देने के लिये नहीं आते। उन्हें जानकारी और अनुभव है, जिससे लाभ उठाकर हम कुएँ के पानी का उपयोग करना शुरू कर देते हैं। इसी प्रकार महात्मा समझाते हैं कि मालिक के भक्तों और प्यारों, संत-सतगुरुओं को हमारे अन्दर घोल कर कुछ नहीं डालना है, परमात्मा ने वह दौलत हमारे ही लिए, हमारे अन्दर रखी हुई है। उन्हें तो इशारा करना है, तरीका समझाना है, जिसके द्वारा हम अन्दर उस दौलत को प्राप्त करके बादशाह बन जाते हैं, हमारा जन्म-मरण के दु:खों से छुटकारा हो जाता है।

आप देखें कि विद्या की शक्ति हम सबके अन्दर मौजूद है, परन्तु वह सोई हुई है। जब हम स्कूलों-कालेजों में जाते हैं, अध्यापकों की आज्ञा मानते हैं, रातें जागते हैं, मेहनत करते हैं, तब बी० ए०, एम० ए०, विद्वान, इन्जीनियर, डॉक्टर, आदि बन जाते हैं। जिनके पास डॉक्टर या इन्जीनियर की डिग्री है, पूछ कर देखें, अध्यापकों ने कौन-सी चीज़ घोल कर उनके अन्दर डाली है। केवल अध्यापकों की संगति और साथ करने से ही आज वे इतने लायक बने बैठे हैं। जो अध्यापकों से डर कर भाग आते हैं, विद्या की शक्ति तो उनके अन्दर भी होती है, पर सोई आती है और सोई हुई ही चली जाती है। इसलिये यहाँ स्वामीजी महाराज फ़रमाते हैं कि आपको जो कुछ मिलना है, वह शब्द

और नाम की कमाई से ही मिलना है और जब भी अपने ख़याल को अन्तर में शब्द और नाम से जोड़ सकेंगे, केवल गुरुमुखों के द्वारा ही जोड़ सकेंगे, साधू, सन्तों, महात्माओं के द्वारा ही जोड़ सकेंगे। गुरु अर्जुनदेव जी कहते हैं:

'जिस का गृहु तिनि दीआ ताला कुंजी गुर सउपाई ॥
अनिक उपाव करे नही पावैं, बिनु सतिगुर सरणाई ॥'

(आदि ग्रन्थ, २०५)

कि हे भाई, जिस परमेश्वर ने तुझे पैदा किया है, उसने नाम रूपी सम्पत्ति तेरे अन्तर में, तेरे लिए रख कर उसका भेद, उसकी कुंजी गुरुमुखों के हवाले कर दी है । तू मन-बुद्धि द्वारा, ग्रन्थ-पोथियाँ, वेद-शास्त्र पढ़कर, सत्संग सुनकर कितना भी इस वस्तु को ढूँढने की कोशिश क्यों न करे, कभी सफल नहीं हो सकेगा। **'बिनु सतिगुर सरणाई'** जब तक तू गुरुमुखों के बताये हुए उपदेश पर नहीं चलता । इसलिए स्वामीजी बार-बार हमें इसी नुक्ते या विषय पर लाते हैं कि जो कुछ भी मिलना है, शब्द की कमाई से मिलना है, नाम की कमाई से मिलना है। और जब भी नाम की कमाई कर सकेंगे, केवल गुरुमुखों के ज़रिये और मालिक के भक्तों के ज़रिये ही कर सकेंगे।

सुर्त खैंच चढ़ावो गगनी । धुन शब्द सुनो यह करनी ॥

स्वामीजी महाराज की शिक्षा हमें शरीर से बाहर नहीं जाने देती, हमारे मन को किसी कर्मकांड की ओर नहीं जाने देती । आप फ़रमाते हैं, **'सुर्त खैंच चढ़ावो गगनी'**, कि केवल एक ही करनी करने की आवश्यकता है कि सुरत को नौ द्वारों से निकालकर आँखों के पीछे लाकर शब्द के साथ जोड़ो । यह नहीं कि गंगा गये तो गंगा राम बन गये, यमुना गये तो यमुनादास बन गये ओर जो भी किसी ने बताया वही कर्म करना शुरू कर दिया । यहाँ भी माथा टेक लिया, वहाँ भी माथा टेक लिया कि शायद सब-कुछ इन चीज़ों से ही मिल जायेगा। आप फ़रमाते हैं कि इस बात को अच्छी तरह मन में बिठा लो कि जो कुछ भी मिलना है, सुरत-शब्द के अभ्यास से मिलना है, नाम की

कमाई से मिलना है।

'हाथी के पाँव में सबका पाँव।' जप-तप, पूजा-पाठ, पुण्य-दान का जो भी फल है, वह सब शब्द और नाम की कमाई में ही आ जाता है। आप देखें, अगर हमारी ज़बान पर दिन-रात उस मालिक का नाम चढ़ा हुआ है, इससे बड़ा और कौन-सा जप हो सकता है? जब उस मालिक के हुक्म, मालिक के भाने में रहते हैं, इससे बड़ा तप और कौन-सा हो सकता है? जब प्यार में आकर महात्मा के स्वरूप को चौबीस घण्टे साथ-साथ लिये फिरते हैं इससे बड़ी पूजा और क्या हो सकती है? जब ख़याल को आँखों के पीछे टिका कर अन्तर में अनहद वाणी को सुनते हैं, उससे बड़ा पाठ क्या हो सकता है? जब नाम रूपी अमृत को पीकर मन ही संसार से उदास और उचाट हो जाता है, इससे बड़ा वैराग्य क्या हो सकता है? न घर-बार छोड़ने की आवश्यकता है, न बेटे-बेटियाँ त्यागने की आवश्यकता है। दुनिया में रहना है, सूरमा बनकर रहना है, बहादुर बनकर रहना है और दुनिया में रहते हुए भी दुनिया की गन्दगी में नहीं लिबड़ना है तथा अपनी सुरत को आँखों के पीछे लाकर नाम से जोड़ना है।

गुरु नानक साहिब कहते हैं: 'पूजा करै सभु लोकु संतहु मनमुखि थाइ न पाई ॥' (आदि ग्रन्थ, ९१०) कि भक्ति तो सब दुनिया के जीव अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार करते हैं, क्योंकि आत्मा का आकर्षण अपने असल की ओर अवश्य खिचाव करता है और उसके अधीन होकर सब उस परमात्मा को ढूंढना शुरू कर देते हैं, परन्तु जो शब्द की कमाई करके, नाम की कमाई करके अपने मन को पवित्र कर लेते हैं, परमात्मा की वास्तविक भक्ति की जाँच या परख उन गुरुमुखों को ही है। यही भक्ति वापिस ले जाकर हमें हमारे ठिकाने पर पहुँचायेगी। स्वामीजी कहते हैं कि जो भक्ति उस परमात्मा को मंजूर है, वह सुरत को आँखों के पीछे लाकर नाम या शब्द की कमाई करने की भक्ति है।

मन चंचल थिर न रहावे। चित निर्मल कस होय आवे॥
सुर्त शब्द कमाई करना। सब जतन दूर अब धरना॥

आप फ़रमाते हैं कि अगर तालाब में पानी गन्दा हो, उसके अन्दर लहरें उठ रही हों, हम उसमें अपनी शक्ल नहीं देख सकते। यदि लहरें स्थिर हो जायें, मिट्टी बैठ जाये तो हम उसमें अपनी शक्ल देख सकते हैं। हमारे मन के अन्दर विषयों-विकारों, शराबों-कवाबों, जातियों, धर्मों और देशों के मोह की लहरें दिन-रात उठ रही हैं। हमारा मन संसार के मोह और प्यार में फँस कर अति गंदा और मैला हो चुका है। जब तक हम अपने आपको पहचानने के योग्य नहीं बनते, हम परमात्मा को पहचानने के योग्य किस प्रकार बन सकते हैं? इस कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिये यही उपाय है : '**सुर्त शब्द कमाई करना**', कि सुरत को शब्द के साथ जोड़ो, नाम के साथ जोड़ो। फिर समझाते हैं, '**सब जतन दूर अब धरना ॥**' सिवाय सुरत-शब्द के अभ्यास के, नाम की कमाई के, और कोई यतन करने की ज़रूरत नहीं है। बाकी सब साधन, सब उपाय छोड़ देने हैं, सब कर्मकांड छोड़ देने हैं, केवल सुरत शब्द की कमाई करनी है, नाम की कमाई करनी है। आप फ़रमाते हैं कि मन की रुकावट को दूर करने का केवल एक ही उपाय है कि अपने ख़याल को अन्तर में शब्द से जोड़ो, अन्तर में नाम से जोड़ो।

निश्चय दृढ़ इस पर धरना । आलस कर कभी न फिरना ॥

अब स्वामीजी महाराज दो ज़बरदस्त नसीहतें, देते हैं। एक तो महात्मा पर, गुरुमुखों पर, भरोसा करना है, विश्वास करना है कि शब्द और नाम की कमाई ही एक ऐसी भक्ति है जो हमें वापिस ले जाकर परमात्मा से मिला सकेगी, यही भक्ति हमारे मार्ग से मन की रुकावट को दूर कर सकेगी, आत्मा और मन की गाँठ खोल सकेगी। इसी के द्वारा हमारी आतमा पवित्र हो सकेगी, परमात्मा से मिलने के योग्य हो सकेगी। अगर हमें भरोसा न हो, विश्वास न हो, हमारा मन कभी भी नाम की कमाई की ओर चल ही नहीं सकता। अगर हमें पता हो कि यह सड़क सीधी दिल्ली की ओर जाती है किस प्रकार अपनी मोटर दौड़ाते चले जाते हैं। अगर मन में शंका या भ्रम हो, जगह-जगह खड़े होकर पूछते हैं, नक्शे देखते हैं। थोड़ा चलते हैं, पर कभी दायें

मुड़ जाते हैं, कभी बाईं ओर चल पड़ते हैं। हमारी यात्रा कितनी लम्बी हो जाती है। यदि भरोसा न हो, यह संसार प्रगति ही नहीं कर सकता। हमें विश्वास होता है तब हम हवाई-जहाज़ों में सैर करते हैं, समुद्री जहाज़ों में घूमते हैं। गाड़ियों में रात को निश्चिंत होकर सो जाते हैं, वे कितने गड्ढों पर से गुज़रती हैं, कितनी नदियों पर से जाती हैं; उन पर भरोसा करके ही यात्रा तय की जा सकती है। स्वामी जी महाराज कहते हैं कि महात्मा अपना जो निजी अनुभव समझाते हैं कि सुरत-शब्द के अभ्यास द्वारा ही मन की रुकावट मार्ग से दूर होगी, हमें उनके उपदेश, उनकी शिक्षा पर भरोसा करना पड़ेगा, विश्वास करना पड़ेगा, ताकि हम उनके अनुभव से पूरा-पूरा लाभ उठा सकें।

दूसरी सीख यह देते हैं कि हमें आलस नहीं करना चाहिए, सुस्ती नहीं करनी चाहिए। रोज़ मालिक की भक्ति को पूरा-पूरा समय देना चाहिये। मालिक की भक्ति का कोई ख़ास समय नहीं है। सुबह बैठें, दोपहर को बैठें, शाम को बैठें, जो भी समय हम मालिक की भक्ति, नाम की कमाई के लिये निकालेंगे, वही समय हमारे लेखे में लिखा जाता है। परन्तु सुबह के समय के बहुत से ऐसे लाभ हैं, जो हमें दूसरे किसी समय में मिल ही नहीं सकते। जिस समय हम सुबह सोकर उठते हैं, सबसे पहले हमारा शरीर बिलकुल ताज़ा होता है, पिछले दिन की हमारी सारी थकावट दूर हो चुकी होती है, हमारा ख़याल भी संसार के अन्दर फैला हुआ नहीं होता, गलियों, मुहल्लों में भी शान्ति होती है। फिर जब हम एक नया दिन शुरू कर रहे हैं तो क्यों न मालिक का नाम लेकर शुरू किया जाये, ताकि उसका सुरूर, उसकी खुशी सारा दिन हमारे साथ रहे। अगर हम दोपहर के समय भजन में बैठेंगे, स्त्रियों को चौके चूल्हे का काम भी करना है, पुरुषों को दफ्तर भी जाना है तथा गलियों-मुहल्लों में भी कितना शोर होता है—वह समय भी नहीं निकलता। यदि हम शाम को भजन करते हैं, सारा दिन काम कर-कर के शरीर थक जाता है और सारे दिन के झगड़े आँखों के आगे आकर फिरना शुरू हो जाते हैं। जो सुबह घण्टा, डेढ़

घण्टे में काम बनता है, उसके लिये शाम को चार-पाँच घण्टे चाहियें। इतना समय किसके पास होता है। इसलिये महात्मा सुबह के समय को ही भजन के लिए उपयुक्त बताते हैं।

इसका यह मतलब नहीं कि जिसके पास सुबह समय न हो, वह दोपहर को न बैठे या शाम को भजन के लिए न बैठे। जो घड़ी, दो घड़ी, घण्टा, दो घण्टा मालिक की भक्ति करेंगे, नाम की कमाई करेंगे, वही हमारे लेखे में लिखी जायेगी उसी का हमें लाभ मिलेगा। इसलिए स्वामीजी कहते हैं कि आलस न करें, सुस्ती न करें। योंही कागज़-पैंसिल लेकर योजनायें न बनाते रहो कि थोढ़े वर्ष रह गये हैं, रिटायर हो जायेंगे, बाल-बच्चे कारोबार सँभाल लेंगे, तब निश्चिन्त होकर किसी मन्दिर, मस्जिद या गुरुद्वारे में बैठ कर मालिक की भक्ति करेंगे। कितनी भी नेक-नीयत से, अच्छी भावना से योजनाएँ क्यों न बनायें, हमें मालिक की योजनाओं का पता नहीं चलता। कुछ पता नहीं कि कब भरे परिवार को छोड़कर जाना पड़ जायेगा किस समय मालिक का बुलावा आ जायेगा। आप रोज़ अखबारों में पढ़ते हैं कि ग्रास हाथ में ही रह जाता है, मुख तक नहीं पहुँचता कि हृदय-गति रुक जाती है। हम योजनाएँ तो ऐसे बनाते हैं, जैसे हमें हज़ारों वर्ष रहना है।

स्वामीजी महाराज समझाते हैं कि रोज़ मालिक की भक्ति करनी चाहिये। मन के साथ ज़बरदस्ती भी करनी पड़े तो ज़रूर करनी चाहिए, क्योंकि यही चीज़ अन्त समय हमारे साथ जायेगी बाकी संसार की सब चीज़ें यहीं छोड़ देनी पड़ेंगी। यदि महमूद गज़नवी के साथ हिन्दुस्तान की धन-दौलत न जा सकी, हमारे साथ दुनिया की कौन-सी धन-दौलत जा सकेगी ? यह जो रुपया-पैसा, सम्पत्ति आदि आज हमारे नाम है, ये वस्तुएँ कभी हमारे बुजुर्गों के नाम भी थीं। अगर उनके साथ नहीं गईं, हमारे साथ किस प्रकार जा सकेंगी। अगर ये चीज़ें किसी के साथ जा सकती होतीं तो लोग पहले ही बुक करवा कर भेज देते। हमारे हिस्से कुछ भी न आता। स्वामीजी प्यार के साथ

फ़रमाते हैं कि इस बात में कभी आलस न करें। रोज़ नाम की कमाई करनी है, रोज़ मालिक की भक्ति करनी है।

यह सार सार सब गाया। संतन मत भाख सुनाया।।

अब सब कुछ कह कर आप फ़रमाते हैं कि मैं अपनी ओर से कोई अनोखी बात नहीं बता रहा हूँ, कोई नई फिलासफी नहीं समझा रहा हूँ। '**सार सार सब गाया।**' आप कहते हैं कि जितने भी संत-महात्मा संसार में आये हैं, सब का यह निजी अनुभव है तथा हरएक महात्मा नें इसी सुरत-शब्द के अभ्यास का प्रचार किया है। महात्माओं के उपदेश को उनके असली अर्थं में समझने की कोशिश करनी चाहिये। उनका उपदेश कुल आलम के लिये, सारे संसार के लिये है। हमें उस ऊँचे और निर्मल उपदेश को जातियों, धर्मों और देशों में बन्द करने की कोशिश नहीं करनी चाहिए, बल्कि उनकी निर्मल रूहानियत को समझना चाहिये, ताकि सब लोग महात्मा की वाणी से लाभ उठा सकें। इसलिये स्वामीजी महाराज कहते हैं कि जितने भी संत-महात्मा आये हैं, सब ने शब्द का प्रचार किया है, नाम का प्रचार किया है।

राधास्वामी भेद लखाया। सुन मान सार समझाया।।

यह 'राधास्वामी' न किसी जाति या सम्प्रदाय का नाम है, न किसी धर्म का नाम है। जिस प्रकार अन्य महात्माओं ने अपनें-अपनें प्यार में उस परमात्मा के नाम रखे हुए हैं, उसी प्रकार हुजूर स्वामीजी महाराज ने उस परमात्मा को 'राधास्वामी' कह कर याद किया है। 'राधा' का अर्थं आत्मा है, 'स्वामी' का अर्थं परमात्मा है। स्वामी-स्वामी सभी महात्मा उस परमात्मा को कहते आये हैं। गुरु अर्जुन साहिब कहते हैं : '**ऊच आपार बेअंत सुआमी।।**' परन्तु वह किस का स्वामी है? हमारी आत्मा का स्वामी है। इसलिए आपने साथ ही 'राधा' का शब्द लगा दिया। यह कोई कौम नहीं है, कोई मज़हब नहीं है; न कभी हमें यह कोशिश करनी चाहिये कि महात्माओं को इतनी ऊँची और निर्मल वाणी तथा उपदेश को किसी कौम या मज़हब का रूप देने की कोशिश करें। मैंने अर्ज़ की थी कि महात्मा तो निर्मल

रूहानियत का प्रचार करने के लिए आते हैं, केवल शब्द और नाम की कमाई करने का शौक और प्रेम पैदा करने के लिए आते है। हमें चाहिये कि महात्माओं के उपदेश को सही अर्थों में समझ कर उससे लाभ उठायें।

स्वामीजी महाराज ने इस छोटे-से शब्द में बड़ी अच्छी तरह, स्पष्ट रूप से समझाया है कि शब्द और नाम की कमाई क्यों करनी है, शब्द और नाम किस जगह है, ख़याल को शब्द और नाम से किस प्रकार जोड़ना है। मेरा तीनों दिन भिन्न-भिन्न महात्माओं की वाणी लेने का केवल इतना ही भाव था कि जितने भी संत-महात्मा आये हैं, सबका एक ही सन्देश है, एक ही उपदेश है। हमें भी उनके अनुभव से लाभ उठाकर अपने ख़याल को अन्दर शब्द से जोड़ना चाहिये, नाम से जोड़ना चाहिये।

सत्संग-२५

★

महाराज चरनसिंह जी

★

प्रकाशक : एस. एल. सोंधी,

सेक्रेटरी : राधास्वामी सत्संग ब्यास।

★

पहली बार : १००००—सितम्बर १९८१

★

मुद्रक : अरविन्द प्रेस, फतेहपुरा, जालन्धर।

सत्संग-२५

राधास्वामी सत्संग ब्यास